तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

SAPTHAGIRI (HINDI)
SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY
Volume:55, Issue: 03
August-2024, Price Rs.20/-,
No. of pages-56.

अगस्त-2024
रु.20/-

प्रसीद मे महालक्ष्मि! सुप्रसीद महाशिवे।
अचला भव संप्रीत्या सुस्थिरा भव मग्दृहे।।

(16-08-2024 को श्री वरलक्ष्मी व्रत)

दि. 19-06-2024 से दि. 21-06-2024 तक तिरुमल में संपन्न ज्येष्ठाभिषेक महोत्सव कार्यक्रम के दृश्य। इस संदर्भ में धर्मपत्नी सहित ति.ति.दे. के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस., जी ने भाग लिया।

दि. 17-06-2024 से दि. 21-06-2024 तक तिरुचानूर में संपन्न
श्री पद्मावती देवी का प्लवोत्सव के दृश्य।

दि. 27-06-2024 से दि. 29-06-2024 तक संपन्न
तिरुचानूर श्री सुंदरराज स्वामीजी का अवतारोत्सव कार्यक्रम के दृश्य।

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति।।

(- श्रीमद्भगवद्गीता - सांख्ययोग २-१७)

नाश रहित जो है तू उसे जान, जिससे यह संपूर्ण जगत् - दृश्यवर्ग व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश करने में कोई भी समर्थ नहीं है।

कानवच्चे निंदुलोने कारूण्य नरसिंहा
चानकमै नीकंटे दास्यमे पो घनमु ।।कान।।

येनसि प्रह्लादुडु एक्कड जूपुनो यनि
ननिचि लोकमेल्ल नरसिंह गर्भमुलै
पनिपूनि वुंडिनटु भक्त परतंत्रुडवै
तनिसि नीवधिकमो दासुले यधिकमो ।।कान।।

मक्कुव ब्रह्मादुलु मानुपरानि कोपमु
इक्कुवै प्रह्लादुडु येदुट निलिचितेनु
तक्कक मानितिनट्टे दासुनि यधीनमै
निक्कि नी किंकरुडे नीकंटे बलुवुडु ।।कान।।

अरसि क्रम्मर प्रह्लाद वरदुडनि
पेरु पेट्टुकोंटिविट्टे बेरसि श्रीवेंकटेश
सारे नी शरणागत जनुनि काधीनमैति
नी रीति नी दासुनके इदिवो मोक्केमु ।।कान।।

भगवान से बढ़कर भक्त को ही अधिक महिमावान सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है।

हे भक्तवत्सल! श्री नारसिंह! हमें यह अवगत हो गया है कि तुम से श्रेष्ठ तुम्हारा भक्त ही है। प्रह्लाद अपने पिता हिरण्यकश्यप से कहता है कि चाहे जहाँ भी हो, वह भगवान को दिखा सकता है। तब तुमने तत्क्षण जगत के हर एक वस्तु में व्याप्त हो गये थे, ताकि जहाँ और जब चाहे प्रह्लाद, तुम्हें अपने पिता को दिखा सके। इस घटना से साफ मालुम हो गया कि भक्त ही भगवान से अधिक शक्तिमान है। जब ब्रह्म आदि देवता भी तुम तक पहुँचने का साहस न जुटा पाये, तब प्रह्लाद ने तुम्हारे सामने आकर, उस भीषणता को कम करने का आग्रह किया और तुम उसी क्षण शांत हो गये। हे कृपालु! तुमने अपना नाम भी प्रह्लाद-वरद रख लिया है। भगवान को भक्तों के अधीन कहने के लिए इससे बढ़कर उदाहरण और क्या चाहिए? इसीलिए मैं भी आप ही के भक्तों की शरण में आना चाहता हूँ।

संकीर्तना सौजन्य - ति.ति.दे. प्रकाशक, अन्नमाचार्य गीत-माधुरी, डॉ.पी.नागपद्मिनी

सप्तगिरि

पत्रिका चंदा विवरण

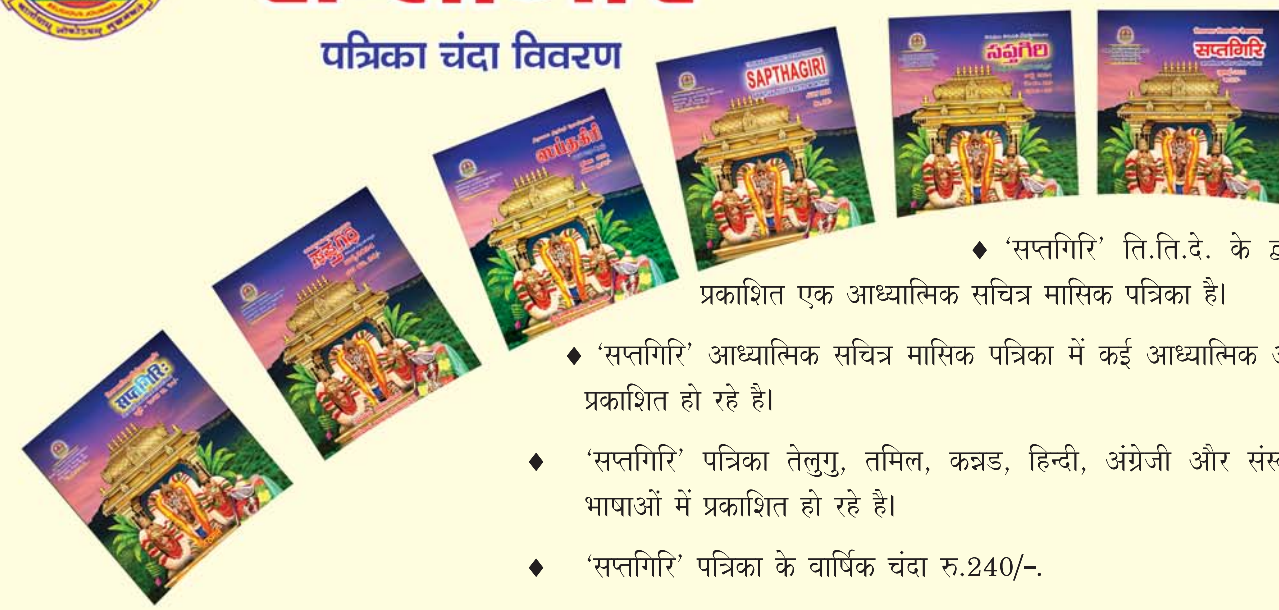

♦ 'सप्तगिरि' ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित एक आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका है।

♦ 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका में कई आध्यात्मिक अंश प्रकाशित हो रहे है।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका तेलुगु, तमिल, कन्नड, हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषाओं में प्रकाशित हो रहे है।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के वार्षिक चंदा रु.240/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के जीवन (12 वर्ष ही मात्र) चंदा रु.2,400/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा रु.1,030/–.

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका के चंदा भरने के लिए पाठक गण मांगड्राफ्ट(D.D.), ई.एम.ओ (EMO), भारतीय डाकघर(IPO) और ऑनलाइन (ttdevasthanams.ap.gov.in) के द्वारा दर्ज कर सकते हैं।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका चंदा केलिए पाठक किसी भी जातीय बैंक में 'चीफ एडिटर, सप्तगिरि मागजैन, टि.टि.डी., तिरुपति' के नाम पर डी.डी. लेकर, डाकघर के द्वारा संबंधित विवरण लिख कर, 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति' पते को भेजना चाहिए।

♦ चंदादार अपने घर का पता, पिनकोड, मोबाइल नंबर, वांछित भाषा विवरण स्पष्ट रूप से लिख कर भेजना चाहिए।

♦ 'सप्तगिरि' पत्रिका समय पर नहीं पहुँचे, तो घर के पते में कोई परिवर्तन हुई, तो यहाँ सूचित ई-मेइल (chiefeditortpt@gmail.com) से कृपया संपर्क करें।

♦ अतिरिक्त समाचार के लिए दूरभाष-0877-2264543 / 2264359 से संपर्क करें।

♦ अन्य विवरण केलिए ''प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड, तिरुपति - 517 507'' पते पर संपर्क करें।

♦ सीधे संपर्क करना चाहिए है, तो प्रधान संपादक कार्यालय के समयों में संपर्क करें।

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-55 अगस्त-2024 अंक-03

गौरव संपादक
श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री पी.रामराजु
विशेष अधिकारी,
पुस्तक बिक्री केंद्र & मुद्रणालय,
ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

एक प्रति .. रु.20-00
वार्षिक चंदा .. रु.240-00
जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) .. रु.2,400-00
विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा .. रु.1,030-00

विषयसूची

गृहलक्ष्मी - वरलक्ष्मी	डॉ.आर.सुमनलता	07
तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर (तिरुपति बालाजी)	प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव, प्रो.गोपाल शर्मा	10
मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा का जीवन-चित्रण	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	13
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	17
यज्ञोपवीत की महिमा	श्री वेमुनूरि राजमौलि	19
श्रीवैष्णव दिव्यदेश-108	श्रीमती विजया कमलकिशोर तापडिया	21
कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्	श्रीमती वी.केदारम्मा	24
गोपूजा विधान		27
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	31
विभाजन (आसानी विधियों द्वारा)	डॉ.वड्डी जगदीश	32
श्री वेंकटाचल की महिमा	आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी	35
सर्व विद्या प्रदाता! नमो नमः!!	श्रीमती एन.मनोरमा	39
विनता	डॉ.के.एम.भवानी	40
शुकदेव	डॉ.जी.सुजाता	42
पालक के स्वास्थ्य में लाभ	डॉ.सुमा जोषि	45
अगस्त महीने का राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	47
नीतिकथा - एक लक्ष्य - एकलव्य	डॉ.जी.शेक षावली	48
चित्रकथा - 'आगे की सोच अनिवार्य है'	डॉ.एम.रजनी	50
क्विज - 25		52

website: www.tirumala.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है।
सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri.helpdesk@tirumala.org

मुखचित्र - तिरुचानूर, श्री पद्मावती देवी।
चौथा कवर पृष्ठ - भगवान श्रीकृष्ण परमात्मा। (चित्रकार - श्री बालाजी श्रीनिवासन्)

अन्य विवरण के लिए
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।
- प्रधान संपादक

वरप्रदायणी माता वरलक्ष्मी नमस्तुभ्यं!

कलियुग प्रत्यक्ष देव भगवान वेंकटेश्वर स्वामीजी का हृदयेश्वरी श्री पद्मावती देवी जी तिरुचानूर क्षेत्र में विराजित होकर भक्तों के मनोभीष्ट सफलीकृत कर रही हैं। भगवती के अष्टलक्ष्मी रूपों के साथ-साथ श्री वरलक्ष्मी देवी का अवतार भी सर्वश्रेष्ट दायक है।

श्रावण मास में पूर्णिमा के पहले आनेवाले शुक्रवार के दिन संपन्न करनेवाले व्रत ही ''श्री वरलक्ष्मी व्रत'' है। श्रावण मास में आनेवाले सभी मंगलवार के दिन 'मंगलगौरी व्रत' आचरण करें, तो सुहागिन स्त्रियों का सौभाग्य मिलता है। वैसे ही इसी श्रावण मास में पूर्णिमा के पहले आनेवाले शुक्रवार वरलक्ष्मी व्रत करना श्रेष्ठराज है। किसी कारण वश इस दिन पूजा करने का कष्ट पहुँचे तो, इसी महीने का कोई भी शुक्रवार व्रत करने का मौका है।

पांचरात्र आगम में पूजाएँ संपन्न करने वाली इस तिरुचानूर क्षेत्र में भगवती अलमेलुमंगा(श्री पद्मावती देवी) पद्मसरोवर में कार्तिक मास, शुक्ल पक्ष शुक्रवार, उत्तराषाडा नक्षत्र में, अभिजित लग्न में स्वर्ण पद्म में आविर्भूत होकर इस क्षेत्र में विराजित हुए। इस मंदिर में नित्योत्सव, वारोत्सव, पक्षोत्सव और वार्षिकोत्सव के रूप में पूजाएँ अत्यंत रमणीय ढंग से संपन्न करते हैं। इस वार्षिकोत्सव के अंतर्गत भगवती देवी का ब्रह्मोत्सव, वसंतोत्सव, ज्येष्ठाभिषेक महोत्सव के साथ-साथ श्री वरलक्ष्मी व्रत भी आयोजित किया जाता है।

माता पार्वती का संदेह निवृत्ति करते समय भगवान शंकर जी से बतायी गयी व्रत 'श्री वरलक्ष्मी व्रत' है। सर्वमंगल प्रसादित व्रत, मनोवांछा फल सिद्धि करने वाला यह व्रत परम पवित्र, सर्वश्रेष्ठ व्रतराज है। धन-दौलत, संपत्ति, सुख समृद्धि, आनंद, आरोग्य, ऐश्वर्य, विद्या-बुद्धि प्रदायणी माता श्री वरलक्ष्मी देवी से भरपूर रूप से अपने को आराधन करने वाले भक्तों को प्रसादित करूणामूर्ति माता वरलक्ष्मी देवी ही है।

भगवती पद्मावती देवी, तिरुमल श्री बालाजी के वक्षःस्थल में व्यूहलक्ष्मी के रूप में विराजित होकर, भक्तों के मनोकामनाएँ सफलीकृत करने में माता का अचंचल वात्सल्य, प्रेमा, करूणा से भगवान जी तक पहुँचाने में एक मातृमूर्ति के रूप में कार्य करते हैं। भक्तों का रक्षण, सर्व सुख संपत्ति प्रसादित करने में माँ का अनुग्रह अद्वितीय है।

ईशानां जगतोऽस्य वेंकटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं, तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्-क्षांतिसंवर्धिनीम्।
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियं, वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वंदे जगन्मातरम्।।

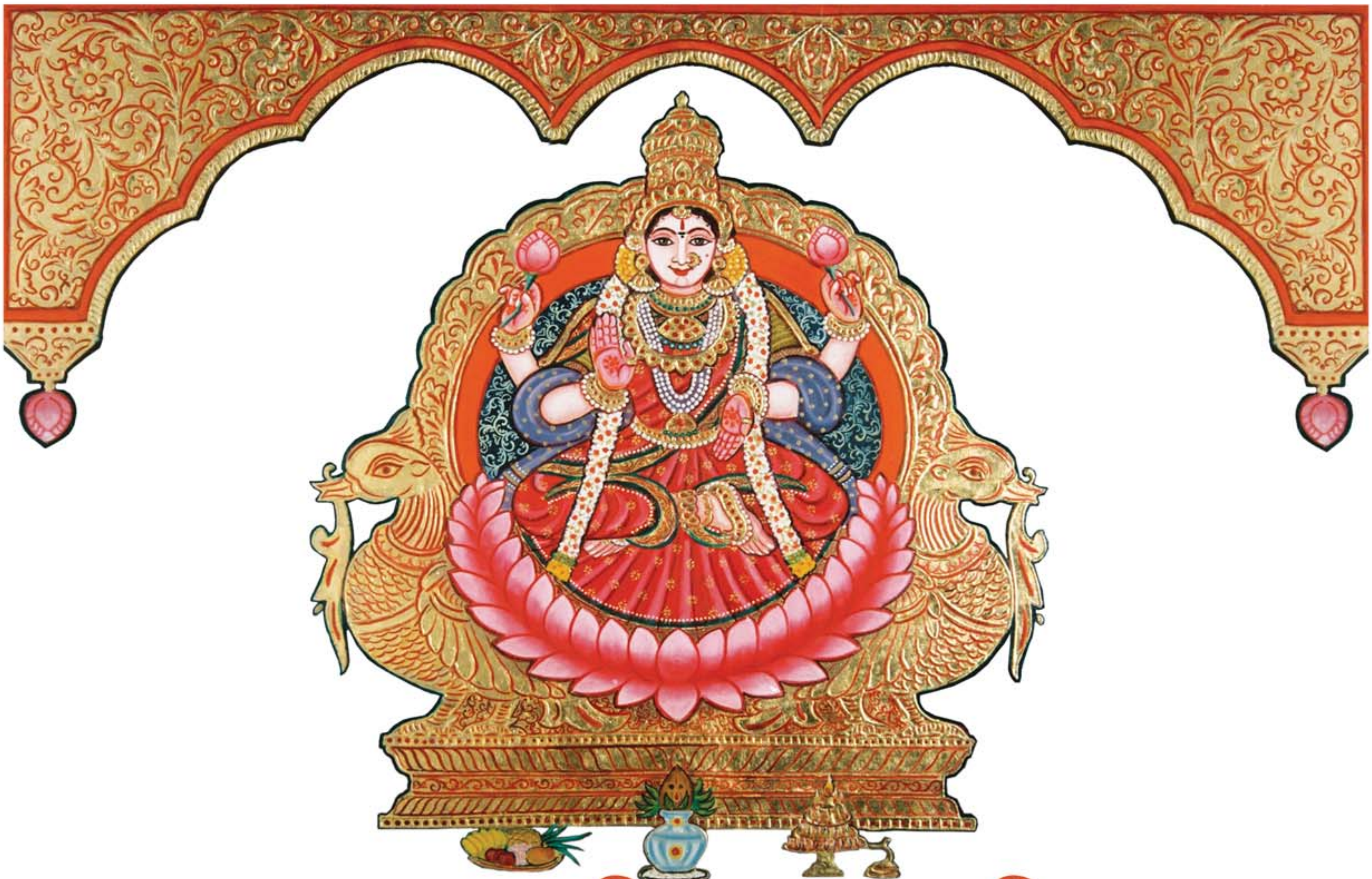

गृहलक्ष्मी - वरलक्ष्मी

- डॉ.आर.सुमनलता

भारत, ऋतुओं का देश है। त्योहारों का देश है। जीवन को रंगों से भरकर, आह्लाद का आह्वान करनेवाला देश है। आध्यात्मिकता और सामाजिकता का सम्मिश्रण है।

'वसंत' में प्रकृति के नए रूप का आस्वादन कर, ग्रीष्म के ताप को सहने के बाद आनेवाली पहली वौछार से धीरे-धीरे 'वर्षा' ऋतु की ओर जन-जीवन आगे बढ़ता है। सावन - भादों के महीनों के आगमन से ही त्योहारों का सिलसिला भी आरंभ हो जाता है।

श्रावण की हरियाली मन मोह लेती है। एक ओर शिवजी की आराधन के लिए 'हर-हर महादेव' के निनादों से गूंज उठता है भारत का उत्तरी भाग। वहीं भारत के दक्षिणी भाग में स्थित तेलुगु भाषियों के लिए लक्ष्मी और मंगलगौरी के व्रत और पूजायें आरंभ होती हैं। महिलायें अपने इन मन पसंद व्रत करने के लिए आतुरता से वर्ष भर प्रतीक्षा करती हैं। सावन के मंगलवारों पर मंगलगौरी की पूजा की जाती है। इसे विवाह के पश्चात् पाँच वर्ष तक नियमित रूप से मनाकर, सुहागिनें उद्यापन कर लेती है।

श्रावन माह के शुक्रवार लक्ष्मी पूजन के लिए प्रसिद्ध हैं। इनमें से पूर्णिमा से पहले पड़ने वाले शुक्रवार के दिन तेलुगु भाषी घरों की गृहलक्ष्मियाँ पूरी भक्ति और तन्मयता के साथ 'वरलक्ष्मी पूजा' करने के लिए वर्ष भर प्रतीक्षा करती हैं। नए परिधान और यथा शक्ति स्वर्ण खरीदने का मन बना लेती हैं। विवाह के बाद घर की बहू से पहले वर्ष के श्रावण शुक्रवार को ससुराल में यह पूजा संपन्न करवाने की प्रथा हैं। इस अवसर पर बहू को ससुराल से भी सोना

परिवार सदा समृद्ध रहता है। इस पावन व्रत को ''वरलक्ष्मी व्रत'' के नाम से जाना जाता है। इसे श्रावण मास की पूर्णिमा से पूर्व पड़ने वाले शुक्रवार के दिन विधि-विधान से संपन्न कराते हैं।

वास्तव में माता पार्वती, जो स्वयं सर्वमंगला है, सारे संसार की मंगल कामना को ध्यान में रखकर यह प्रश्न किया था। भगवान शंकर ने पार्वती के माध्यम से यह कथा सुनाकर, मनुष्यों का कल्याण करना चाहते हैं। क्योंकि वे स्वयं शुभंकर है। उनके कथन को मेरे अपने शब्दों में प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही हूँ। हे पार्वती! पावन वरलक्ष्मी व्रत का प्रभाव मैं तुम्हें सुनाने जा रहा हूँ। ''कुंडिन'' नामक मगध देश का महान वैभव शाली नगर था। हर घर से लक्ष्मी का वास था वहाँ के घर और प्राकार स्वर्ण से अलंकृत थे। हर घर की महिलायें सौभाग्य के चिह्न आधरण करतीं। उस नगर में 'चारुमति' नामक ब्राह्मण गृहिणी वास करती थी। उन्हें अपने पति और परिवार के प्रति अपार प्रेम था। पूरे गौरव और प्यार के साथ अपने सास-ससुर की वह सेवा करती थी। सारे शास्त्रों की अध्येता थी और सभी काम करने में निपुण भी। चारुमति के मुख से सदैव मधुर भाषण ही सुनने को मिलता था। ऐसी सुशील और निर्मल मन वाली चारुमति के प्रति माता लक्ष्मी ने प्रसन्न होकर स्वप्न में दर्शन देकर कहा - 'हे चारुमति तुम्हारे स्वभाव से मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारे भले के लिए मैं तुम्हें एक व्रत का आचरण करने का आदेश दे रही हूँ - श्रावण मास की पूर्णिमा से पहले आने वाले शुक्रवार के दिन मेरी पूजा और आराधना करो। तुम्हारी इच्छानुसार वर प्रदान करूँगी। इसे सुन अति प्रसन्न होकर चारुमति ने स्वप्न में साक्षात् लक्ष्मी को देख स्तोत्र किया-

''नमस्ते सर्वलोकानां जनन्यै पुण्य मूर्तये
शरण्ये त्रिजगद्वन्द्ये विष्णु वक्षस्थलालये...''

हे माते! आप तो संपूर्ण जगत् की माता हैं। शरण में आये लोगों की आप रक्षा करती हैं। तीनों लोकों में आपकी महिमा का गान होता है। विष्णु वक्षःस्थल पर वास करने वाली माते लक्ष्मी आप की कृपा दृष्टि जिन पर पड़ती है, वे ही अत्यंत गुणी और श्लाघनीय विभव से संपन्न रहते हैं। मेरे कई पूर्व जन्मों के पुण्य के कारण आज आपने मुझ पर कृपा दृष्टि बरसायी और दर्शन दिए। चारुमति के इस निर्मल स्तोत्र से प्रसन्न होकर माता लक्ष्मी ने अनेक वरदान दिए और अदृश्य हो गयीं। चारुमति ने अपने स्वप्न वृत्तांत से अगले दिन परिवार और

और साड़ी और सुहाग का सामान नेग में मिलता है। उसी अगले वर्ष से नई दुल्हन, गृहलक्ष्मी के नाते परंपरा को आगे बढाती हुई वरलक्ष्मी पूजा करती है। इस के लिए कोई उद्यापन नहीं, जीवन भर घर-परिवार की सुहागिनें व्रत को बड़ी तन्मयता से करती हैं।

वरलक्ष्मी व्रत करने की प्रथा विश्व भर में स्थित तेलुगु महिलायें निभाती हैं। अपने घर में पूजा संपन्न कर पास-पड़ोसियों को आमंत्रित कर, उन्हें प्रसाद और अपनी इच्छानुसार तांबूल में फल-पुष्प भिगोये गए चने, हल्दी-कुंकुम, साडी-ब्लाउज पीस आदि देकर उनका सम्मान करती हैं। आज हम वरलक्ष्मी व्रत की कथा और उसके विधि-विधान पर विहंगम दृष्टि डालें।

एक बार माता पार्वती ने भगवान शंकर जी से आह्लाद कारी वातावरण में विराजमान होकर समस्त प्रजा के हित में संपन्न करने वाले किसी एक व्रत के बारे में अवगत कराने के लिए कहा था। तब भगवान शंकर ने कहा- ''सुनो हे पार्वती। व्रतों में से उत्तम व्रत के नाम से विख्यात एक व्रत है उसे सुनाता हूँ। उस व्रत के आचरण से सारी पुत्र-पौत्र, धन-धान्य, सुख और आनंद से वह घर-

बंधुजनों को अगवत कराया। सारे रिश्तेदार भी प्रसन्न हुए। सभी ने मन बनाया कि हम सब इस व्रत का आचरण अवश्य करेंगे।

श्रावण मास की प्रतीक्षा करने लगे। आखिर वह दिन आही गया। सारी सुहागिन महिलायें अपने दैनिक कार्यक्रमों से निवृत्त होकर घर आँगन को साफ किया स्वान किया। रंग-बिरंग साडियाँ पहन कर व्रत करने की तैयारियाँ करने लगीं। घर की पूर्वी दिशामें मंडप को रंगोलियों से सजाया। उस पर वस्त्र बिछाकर उस पर चावल डाला। पूर्ण कुंभ को चावल, हल्दी-कुंकुम, नए-नए आम के और पीपल के पल्लव जैसे पाँच प्रकार के पल्लवों से सुशोभित किया। उस सुसज्जित कलश पर नारियल और नए वस्त्र को रखा। इसे ही माता का रूप मानकर गहनों से यथा शक्ति अपने-अपने ढंग से अलंकृत कर प्रसन्न हुई महिलाओं ने श्रीसूक्त विधि-विधान के अनुसार लक्ष्मी पूजन करने लगी।

''हिरण्य वर्षां हरिणीं सुवर्ण रजत स्रजां...'' से आरंभ कर ध्यान, आवाहन, अर्घ्य, पाद्य, स्नान, वस्त्र, आरती की। माता के अष्टोत्तर नामों को पढते हुए से रंग-बिरंगे पुष्पों से पूजा की। नौ सूत्रों का कंकण फूलों से पिरोकर, नौग्रंथियों की भी पूजा करने के बाद, उसे अपने दाहिने हाथ में पहना। धूप-दीप जैसे षोड्स उपचारों से पूजा करने के बाद अपनी-अपनी इच्छा और शक्ति के अनुसार दूध, फल, पूरण आदि मृष्टान्नों के साथ भक्ष्य-भोज्य-चोष्य-लेह्य और पानीयों से युक्त नौ प्रकार के पकवानों का भोग लगाया।

वरलक्ष्मी ने चारुमति तथा अन्य महिलाओं की भक्ति से प्रसन्न होकर, तुरन्त उन्हें अनुग्रहीत किया। प्रथम परिक्रमा करते ही चारुमति के साथ-साथ अन्य सुहागिनों के पैरों में छुम-छुम बजते पाजेब मिले। बाकी के दोनों परिक्रमाओं के पूर्ण होते ही पूरे शरीर के अंग अमूल्य रत्नांभर से जडित स्वर्णाभूषण से अलंकृत हुए। उनके घरों में अनमोल संपत्ति मिली। चारुमति तथा अन्य सुहागिनों ने पूजा करवाने पधारे ब्राह्मण को दक्षिणा और पकवानों के साथ तांबूल दिया। कथा पढ़वाने के बाद अपने सिर पर अक्षत डलवाकर उनके आशीर्वाद लिया। चारुमति के स्वप्न के माध्यम से सारे लोक को वैभव प्रदान करने के लिए माता लक्ष्मी ने वरलक्ष्मी व्रत का साधन बताया, जिसे माता पार्वती ने अपने प्रश्न के माध्यम से संसार को शंकर जी के मुख से कहलवाया।

यह है वरलक्ष्मी व्रत का विधि-विधान। इसमें ध्यान देने योग्य अंश यह है कि चारुमति ने अपने स्वप्न वृत्तांत को अपने आप तक सीमित नहीं रखा, बल्कि पूरे समाज की भलाई के लिए बहिरंग किया। इससे पूरा समाज एक दूसरे से जानकर पीढ़ी दर पीढी इस व्रत का आचरण कर, वैभव और सुख-संपत्ति को प्राप्त कर रहा है। माता लक्ष्मी पर आस्था रखने वाले परिवारों की गृहलक्ष्मियों के माध्यम से वरलक्ष्मी की असीम कृपा उन पर अवश्य बरसेगी। आस्था और विश्वास के साथ श्रावण के माह में वरलक्ष्मी की पूजा विधिविधान से करने वाली गृहलक्ष्मियों के कारण परिवार सुख-समृद्धि से जीवन बिताते आरहे हैं। वरलक्ष्मी से प्रदत्त वरदान से सारे समाज पर अष्टलक्ष्मियों का अनुग्रह बरसे और सुख-शान्ति और आनंद से जीवन बितायें।

''ॐ श्री महालक्ष्मै च विद्महे विष्णु पत्न्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्।।''

(गतांक से)

तिरुपति श्रीवेङ्कटेश्वर

(तिरुपति बालाजी)

हिन्दी अनुवाद - प्रो.यद्दनपूडि वेङ्कटरमण राव
प्रो.गोपाल शर्मा

सन् 800 के पल्लव राजा विजय दंतिविक्रमवर्मा के 51वीं शासन वर्ष में अखण्ड ज्योति के लिए 30 कलंजु सुवर्ण दान का भी उल्लेख मिलता है। यह लेख सं. 1, खण्ड I में है। यह दान शोलनूर के उलगप्पेरुमानार द्वारा समर्पित है। यह ''तिरुविलंकोयिल - पेरुमानडिगल्'' के सामने हुआ है। ये ''तिरुवेङ्कटत्तु - एम्पेरुमानडिगलुक्कु - एलुंडरुलुविट्ट'' की प्रतिकृति (रेप्लिका) है। तिरुच्चुगनूर की अनुशासन समिति (एडमिनिष्ट्रेशन असेंब्ली) ने इस अनुदान को स्वीकार किया है। उस अनुदान से जमीन खरीदकर उससे मिलनेवाली आमदनी से वेंकटेश्वर भगवान के आनंदनिलय में अखण्ड ज्योति की व्यवस्था हुई है। यही दाता (तिरुविलक्कु वैप्पित्तोम) की इच्छा थी और उसी प्रकार की व्यवस्था की गयी। प्राप्त लेख में उलगप्पेरुमानार की सेवा में ज्योति का नाम ही है। प्रतिकृति (रेप्लिका) कब स्थापित हुई है, इसका जिक्र नहीं है। इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय तक ज्योति की व्यवस्था नहीं थी। उलगप्पेरुमानार ने इस सेवा की व्यवस्था की है। सामवाय द्वारा अनुदान में प्रतिष्ठित मूर्ति के साथ अखण्ड ज्योति की व्यवस्था भी थी। इसलिए उस मूर्ति के लिए ज्योति प्रदान की आवश्यकता नहीं रही होगी। यह माना जा सकता है कि तिरुविलंकोयिल (सं.I) एक और नयी मूर्ति होगी। शायद सन् 830 से पहले उसे प्रतिष्ठित किया गया हो।

[[लेख सं. 1 और 4 (खण्ड-I) के शब्द तिरुच्चुगनूर के तथ्यों से जुडकर इस प्रकार हैं -

''तिरुवेङ्कटक् - कोट्टत्तुक - कुडवूर - नाट्टत् - तिरुच्चोगिनूत् - तिरुवेङ्कटत्तु एमपेरुमान - ओडिगलुक्कु एलुंदरुलुविट्ट तिरुविलंकोयिर पेरुमांनडिगलुक्कुच् - चोल - नाट्टुच् - चोलनूर उलगप्पेरुमानार''

इसमें ''तिरुच्चुगनूर'' और ''तिरुवेङ्कटत्तु एम्पेरुमानडिगलुक्कु'' का सान्निध्य (सं. I)

और

''... कोयिर - पेरुमानडिगलुक्कुम् तिरुमंतिर शाल पेरुमानडिगलुक्कुम तिरुवेङ्कटत्तुप् - पेरुमानडिगलुक्कुम्...'' (सं. 4)

इनसे कुछ लेखकों ने अनुमान लगाया है कि प्रतिकृतियाँ (रेप्लिकास्) अथवा प्रतिरूपात्मक मूर्तियाँ श्री वेंकटेश्वर की

हैं जो वेंकटाद्रि या तिरुवेंगडम् में रहते हैं। उन्हीं को समर्पित और उन्हीं के यहाँ प्रतिष्ठित हैं। ''तिरुविलंकोयिल'' में प्रतिष्ठित ये मूर्तियाँ तिरुच्चुगनूर (तिरुचानूर) में निर्मित मंदिर की हैं।]]

उक्त बातें प्रधानतः श्री टी.के.टी.वीरराघवाचार्य की पुस्तक ''हिस्टरी ऑफ तिरुपति'' (खण्ड I) की हैं। डॉ.एम. रामाराव ने अपनी ''बुकलेट'' ''टेंपुल्स ऑफ तिरुमल, तिरुपति अण्ड तिरुचानूरु'' में अनेक मूर्तियों की शिल्पकला की विशेषताओं को रेखाचित्रित किया है। उनमें निहित प्रतिमा - विज्ञान के आधार पर मूर्तियों की विशिष्टताएँ भी रेखांकित की हैं। उनका निश्चित परिशीलन उसमें द्रष्टव्य है।

श्री वीरराघवाचार्य द्वारा तिरुचानूर की पुरालेखों पर व्याख्याएँ और निर्णय कुछ इस प्रकार हैं - ''यथार्थ में तिरुवेंगडम् मंदिर का इतिहास पहाड से आरंभ नहीं होता है। तिरुचानूर नामक गाँव से आरंभ होता है... यह पहाड से लगभग 10 मील की दूरी पर स्थित है।'' (पृ. 80-81)।

''तिरुमल मंदिर पवित्र तो है, लेकिन मुख्य नहीं माना गया। इसी कारण से हो सकता है कि तिरुविलंकोयिल तिरुचानूर में या वेंकटेश्वर का मंदिर तिरुमुक्कुडल्। यह आरंभिक दिनों की बात है।'' (पृ. 53)।

''यह इसलिए कि तिरुवेंगडम् उडयन जो पर्वत पर हैं, बहु संख्यक भक्तों के लिए सुलभ साध्य नहीं थे। इसीलिए शायद कुछ आल्वारों के कहने पर एक तिरुविलंकोयिल की स्थापना तिरुचानूर में हुई होगी। यह पल्लव राजाओं के शासन के 51वें वर्ष में हुआ होगा। पल्लव राजा विजयदंडि विक्रम वर्मा द्वारा एक अखण्ड ज्योति का भी दान प्रदान किया गया। इसका समय सन् 816 है।'' (पृ.97) ''वहाँ (तिरुचानूर) के मंदिर से संबन्धित आठ शिलालेख हैं, जो उस मंदिर की सूचनाएँ देते हैं। वह मंदिर है तिरुच्चुगनूर तिरुवेंकटत्तुप्पेरुमानडिगल का। (सं. 1, 2, 4, 5... वाल्यूम I, पृ.107)।''

''तिरुच्चुगनूर का प्राचीनतम शिलालेख तैयार हुआ है कोविजय डंटिविक्रमार के शासन के 51वें वर्ष में। इसे हम सन् 826 का मानते हैं। यह शिलालेख हमें स्पष्टतः बताता है कि तिरुवेंगडत्तुप्पेरुमानडिगल का प्रतिरूप तिरुबिलंकोयिल में तिरुच्चुगनूर में रहा है। ''तिरुच्चुगनूर तिरुवेङ्कटत्तु एम्पेरुमानडिगलुक्कु एलुंडरुलिविट्ट तिरुविलंकोयिल पेरुमानडिगलुक्कु...'' तमिल भाषा का यह दीर्घ पदबन्ध यह स्पष्ट करता है कि 'तिरुच्चुगनूर तिरुवेंगडत्तु पेरुमानडिगल' वहाँ थे और तिरुविलनकोयिल - पेरुमान भी एक लघु मूर्ति (या उत्सवमूर्ति) के रूप में व्यवस्थित थे। यहाँ ध्यान देने की मुख्य बात है कि तिरुविलनकोयिल (या प्रतिकृति मंदिर - प्राक्सी टेंपुल) तिरुवेंगडम् मूर्ति के लिए बनाया गया है और प्रतिकृति देव की स्थापना (एलंदरुलि - विट्ट)... सामान्य भक्तों के लिए है।'' (यह शिलालेख पृ. 80 में स्पष्ट है।) ''तिरुच्चुगनूर तिरुवेंगडत्तुप्पेरुमानाडिगल शब्द ही यह सूचित करता है कि वह मूर्ति मूल देवता की नहीं है जो वेंगडम् पर्वत पर है। वह उनकी प्रतिकृति मात्र है। तिरुवेंगडत्तुप्पेरुमान के मंदिर अन्यत्र भी है। तिरुच्चुगनूर में पहले मूलविराट की

प्रतिष्ठा हुई होगी और बाद में उत्सवमूर्ति जो कि शिलालेख में बतायी गयी है। सोलानाट्टु उलगप्पेरुमानर ने सुवर्ण दान अखण्ड ज्योति के लिए किया होगा। यह अखण्ड ज्योति तिरुविलंकोयिल पेरुमानडिगल या उत्सवमूर्ति के लिए होगी। (पृ.109)।

डॉ.एम.रामाराव ने अपनी पुस्तक ''टेंपुल्स ऑफ़ तिरुमल तिरुपति एण्ड तिरुचानूर'' में कहा है - ''दो लिखित प्रमाण हैं (I-1 और 2)। ये इस प्रान्त में प्रथम तीन पल्लव राजाओं से संबन्धित हैं। ये शिलालेख पल्लव राजाओं द्वारा वेंगडम् मंदिर को दिये गये उपहारों से संबन्धित नहीं है। बल्कि तिरुचानूर में स्थापित प्रतिकृति मंदिर को दत्त उपहार हैं।'' (पृ.5) ''प्राचीनतम शिलालेखों में उल्लिखित श्री वेंकटेश्वर तिरुमल या वेंङ्कडम् के वेंकटेश्वर नहीं, लेकिन तिरुचानूर के प्रतिकृति मंदिर के श्री वेंकटेश्वर (तिरुवेंगडमुडैयन) हैं (पृ.41)। ये चौथी सदी में प्रचार में आये हैं। 9वीं सदी में ही तिरुचानूर में प्रतिकृति (प्राक्सी) मंदिर का निर्माण हुआ है। तिरुमल मंदिर का प्राचीनतम अभिलेख बाण राजकुमार विजयादित्य के जन्म का उल्लेख करता है। ये 9वीं शती के पूर्व भाग में थे (I-3)। इस

राजकुमार ने तिरुचानूर के श्री वेंकटेश्वर को दान दिये थे (पृ.19)।

श्री विजयराघवाचार्य आगे स्पष्ट करते हैं कि ''इन दोनों मूर्तियों (मूलमूर्ति और उत्सवमूर्ति) के अलावा एक तीसरे का भी है तिरुमंत्रशालै पेरुमानडिगल् जिनको विजयादित्य ने उपहार दिये थे। इनमें प्रथम दो को स्थानीय देवता और तीसरे को तिरुवेंगडम् पर्वत पर विलसित देव कहा है'' (पृ.110)। ''वहाँ एक अतिरिक्त मंदिर का निर्माण हुआ है (तिरुचानूर में) और तिरुवेंगडमुडैयान की प्रतिकृति स्थापित की गयी। शैवों का वैष्णव धर्म में परिवर्तन (आंतरण) शायद इसी मूर्ति के सामने हुआ होगा। इसी उद्देश्य से प्रतिकृति रूपात्मक मूर्ति की स्थापना की गयी हो (पृ.106)।''

इसके समर्थन में डॉ.रामाराव ने आगे कहा है - ''यह (तिरुचानूर) प्रान्त वैष्णव धर्म के प्रभाव में आठवीं शती के प्रथम चरण में आया है। उस समय तक तिरुमल और श्री वेंकटेश्वर के नाम प्रचार में थे। लेकिन सामान्य भक्तों की पहुँच से बाहर थे। तिरुचानूर के वैष्णवों ने तिरुमंत्रशालै की स्थापना की और नवदीक्षा प्रक्रिया (धर्मान्तरण क्रिया) जारी रखी। उन्होंने तिरुविलंकोयिल का निर्माण किया। श्री वेंकटेश्वर का प्रतिकृति रूप प्रतिष्ठित किया। ये मूलविराट श्री वेंकटेश्वर की प्रतिकृति ही है। तिरुचानूर समतल मैदान में रहनेवाला एक गाँव है। यहाँ श्री वेंकटेश्वर की प्रतिकृत मूर्ति तीर्थयात्री भक्तों को आकर्षित करती रही। भक्तों ने इस मूर्ति के प्रति भक्ति-श्रद्धाएँ दिखाई। (पृ.67)। ''इस तिरुविलंकोयिल में प्रतिनिधि मूर्ति (प्रतिकृति मूर्ति) की स्थापना हुई। यह मूर्ति तिरुवेङ्कटत्तुप्पेरुमानडिगल या तिरुमल श्री वेंकटेश्वर की प्रतिनिधि मूर्ति ही है। ख्याति प्राप्त बाण राजा विजयादित्य ने इसी भगवान को भूमि, कर, सुवर्ण, नैवेद्य आदि के लिए धन आदि उपहार दिये थे। ये ही तिरुविलंकोयिल - पेरुमानडिगल, तिरुमंत्रशालै - पेरुमानडिगल और तिरुवेङ्कटत्तु - पेरुमानडिगल हैं। (1-4)।''

क्रमशः

मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा का जीवन-चित्रण

- श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

भगवान बालाजी-श्री वेंकटेश्वर इस कलियुग के संरक्षक है। वह अनाथों का नाथ है। इतिहास की गति में अनेकों महानुभाव श्री वेंकटेश्वर की अनुकंपा के प्यासी बन कर उनके चरणों-तले दिन-रात पड़े रहें। पल्लव-रानी सामवायि से लेकर-भगवद्रामानुज, अन्नमाचार्य, अनंताल्वार, सम्राट् श्रीकृष्णदेवराय, अनगिनत महंत आदियों ने श्रीस्वामी की अखंड़ सेवा में लगे रह कर अपने जीवन चरितार्थ बनाया।

ऐसे भक्त-मणिगणों में अपने ढंग के स्थान पर विराजमान है - ''मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा!'' तरिगोंडा वेंगमांबा एक कवयित्री थी, जिन्होंने अपना सुदीर्घ शेष-जीवन प्रसिद्ध, पवित्र तिरुमल-क्षेत्र में बिता कर, श्री वेंकटेश्वर के जीवन के इतिहास के चित्रण में ''श्री वेंकटाचल माहात्म्यम्'' नामक महाग्रन्थ का प्रणयन किया।

वेंगमांबा का जीवन-चित्र

मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा आंध्रप्रांत की तेलुगु कवयित्री थी। इसका जन्म आंध्र के जिला चित्तूर में हुआ था। सन् 1730 प्रान्त में वेंगमांबा का जनम हुआ था। तिरुपति दिव्यधाम से वायुव्य दिशा में लगभग 100 कि.मी. की दूरी पर ''तरिगोंडा'' नामक गाँव था, जहाँ भगवान श्रीहरि ''श्री लक्ष्मीनृसिंह'' बन कर बसा हुआ था। अतः 'तरिगोंडा - श्री लक्ष्मीनृसिंह' क्षेत्र नाम से विख्यात है।

उन दिनों तरिगोंडा में कानाला कृष्णयामात्य और मंगमांबा नाम के दो दंपती रहते थे, जो जन्मतया भगवान श्री वेंकटेश के परम भक्त थे। उन बालाजी भक्त-दंपतियों को अपने आराध्य श्री वेंकटेश्वर के वर-प्रसाद में एक तेजोवती कन्या का जनम हुआ, जिसका

‘‘वेंगमांबा’’ नामकरण किया गया था और बड़े लाड़-प्यार के साथ पालन-पोषण किया गया था।

वेंगमांबा का बाल्य काल

वेंगमांबा के माता-पिता जन्मतः भगवान श्री वेंकटेश्वर के परम भक्त थे। अतएव, बालिका वेंगमांबा में भी सहज ही प्रभु बालाजी के प्रति प्रगाढ़ भक्ति का बीज पड़ गया था। बालिका के माता-पिता अपनी लाड़ली प्रिय पुत्री में भगवान के प्रति इस भक्ति-विभोरता पर तोषित हुए, मगर जब बाल वेंगमांबा अपनी उस भक्ति की तन्मयता में नाचने तथा गाने भी लगी, तो वे दंपती जरा-सा परेशान हो गये। क्योंकि, कृष्णयामात्य-दंपती शुद्ध गोत्रिय परिवार के थे। वे नंदवर-शाखा के ब्राह्मण थे। वशिष्ठ-गोत्रज थे।

बाल्य विवाह

अपनी पुत्री की थोड़ी ज्यादा-सी भक्ति-पारवश्यता पर कृष्णयामात्य-दंपती जरा ज्यादा ही व्याकुल थे। उन्होंने अपनी बेटी की इस भगवान के प्रति लालसता कम कराने के अनेक प्रयास किये, मगर फल न मिला। उन्होंने वेंगमांबा का विवाह कर देना चाहा, जिस कोलाहल से बालिका में भक्ति-अवेग का निदान हो जाये।

अब क्या?! - वर ढूंढा गया। वेंगमांबा का वर आन्ध्रप्रांत के चित्तूर के समीप गाँव ‘नारगुंटपालेम्’ का रहने वाला था। वर का नाम था, ‘‘इंजेटि वेंकटाचलपति’’, जो श्रीवत्स-गोत्रज था।

मगर क्या किया जाय! यह इंजेटि वेंकटाचलपति अल्पायुष्क था, जो विवाह के कुछ ही दिनों के उपरान्त भगवान का प्यारा हो गया, अर्थात् मर गया। अब वेंगमांबा अल्पायु में ही विधवा बन गयी। लेकिन, वेंगमांबा ने विवाह के मंगल-चिह्नों को उतारने से इन्कार कर दिया और ऐसे ही पुनिस्त्री बनके घूमती थी।

पीठाधिपति से वाद

उसी समय वेंगमांबा का ग्राम तरिगोंडा में पुष्पगिरि-पीठाधिपति पधारे हुए थे, क्योंकि तरिगोंडा उन दिनों आन्ध्र में एक प्रमुख यात्रास्थल था और आज भी। पीठाधिपति काफी पूर्वाचारपरायण होते थे। वे समाज में आर्ष, वैदिक तथा सांप्रदायिक मूल्यों का परिरक्षण करते फिरते थे।

गाँव के छाँदसवादी लोगों ने वेंगमांबा के विधवा होने तथा उसके भर्तृदारिका मंगल-चिह्नों के न उतारने की शिकायत कर दी थी, तो पुष्पगिरि स्वामीजी ने वेंगमांबा को अपने सम्मुख बुला लिया और उसके मंगलसूत्र, सिंधूर आदि वैवाहिक मंगलों के न त्यागने का प्रश्न किया।

वेंगमांबा ने पीठाधिकारी स्वामीजी का सही उत्तर दिया और उन्हें वह अपने समाधान से संतृप्त कर दिया। उसने स्वामी से बताया, ‘‘भगवान श्री वेंकटाचलपति ही मेरे पतिदेव हैं, जिस कारण मैं इस तरह सुवासिनी बन कर हूँ।’’

वेंगमांबा के इस बेजोड़ जवाब से पुष्पगिरि के पीठाधिकारी निरुत्तर बन गये थे और वेंगमांबा की सुवासिता पर अपनी आपत्ति वापस ले ली। ऊपर से उन्होंने उसकी प्रशंसा में यह घोषणा की, ‘‘वेंगम्मा साधारण बालिका नहीं, वह असाधारण नृसिंह की उपासिका है और परमभक्त प्रह्लाद के अंश में जन्मी है। वर परम भक्तिन है।’’

अलौकिक विद्याभ्यास

पुष्पगिरि पीठाधिकारी के साथ इस भिड़ंत के उपरान्त वेंगमांबा को उसके माँ-बाप ने कुछ गुरूपदेश दिलाना चाहा। उसे कुछ पारलौकिक विद्या का परिचय दिलाना चाहा। इसके लिए उन्होंने 'रूपावतारम् सुब्रह्मण्य देशिक' नामक ब्रह्मवेत्ता के यहाँ अध्ययन के वास्ते छोड़ा। देशिकजी के यहाँ से वेंगमांबा ने ब्रह्म-विद्या सीखी तथा प्रकृति-धर्म का अध्ययन किया। उनसे वेंगमांबा ने योग-विद्या का प्रकार सीखा।

अलौकिक चमत्कार

श्री सुब्रह्मण्य देशिक से वेंगमांबा ने पारलौकिक तत्व के प्रकार सीखे। वह घंटों बैठे योग-साधना का अभ्यास करती थी। योग-साधना में वह अपने को तथा अपने इर्द-गिर्द की प्रकृति-माता का भी वह विस्मरण कर, आत्म-विभोर हो जाती थी।

इस प्रकार वेंगमांबा एक दिन मध्याह्न बेला में भाव-विभोर बन योग-साधना में अर्ध-निमीलित नेत्रों वाली भंगिमा में बैठी हुई थी, तो आसमान से कुछ अक्षरों की पंक्तियाँ महान् कांति के पुँज बन कर, चकाचौंध करते हुए सरासर आकर उसके मुख में प्रविष्ट हुए।

इसका मतलब यह हुआ कि वेंगमांबा को अलौकिक पथ-निर्देश हुआ था। उसमें श्री शारदा का प्रवेश हो पाया। उसे आदेश मिला कि वह आगामी दिनों में साहित्य का सृजन करे और अपने आराध्य परब्रह्म के स्तोत्र में रचना-संरंभ में लगे रहे।

प्रेरणात्मक दुर्घटना

वेंगमांबा अपने गाँव के प्रसिद्ध श्री लक्ष्मीनरसिंहस्वामी के मंदिर में योग-समाधि में बैठ जाती थी। अलौकिक चिंतनामय बन कर वह घंटों इस तरह बिताती थी। ध्यान-मग्न मुद्रा में वेंगम्मा आत्म-विभोर बन जाती थी।

एक दिन वेंगमांबा श्रीस्वामी के मंदिर में बाईं तरफ स्थित महाकाय हनुमानजी के विग्रह की ओट में बैठी योग-साधना करती थी, तो मंदिर के अर्चक को न जाने क्या सूझा कि उसने कोपोद्रिक्त अवस्था में उस कारणजन्मी महिला पर हमला कर दिया और उसके केश पकड़ कर खींचते हुए मंदिर के बाहर कर दिया।

वेंगमांबा का तिरुमल-प्रस्थान

इस हठात् घटना से सब लोग निर्विण्ण रह गये! वेंगमांबा स्थाणू बन कर खड़ी रह गयी! फिर, वह घर न गयी। वेंगमांबा स्थिरचित्त के साथ चलने लग गयी - अपने आराध्य के निवास-स्थल तिरुमल-गिरियों कि तरफ।

कई दिन की पाद-यात्रा के बाद वेंगमांबा तिरुमल दिव्य-धाम में पहुँच गयी। सन् 1745-50 की यह घटना थी। तब के तिरुमल में स्थित श्री हाथीराम्‌जी के मठ के अधिपति महंतजी ने श्री वेंगमांबा को तिरुमल श्रीनिवास के

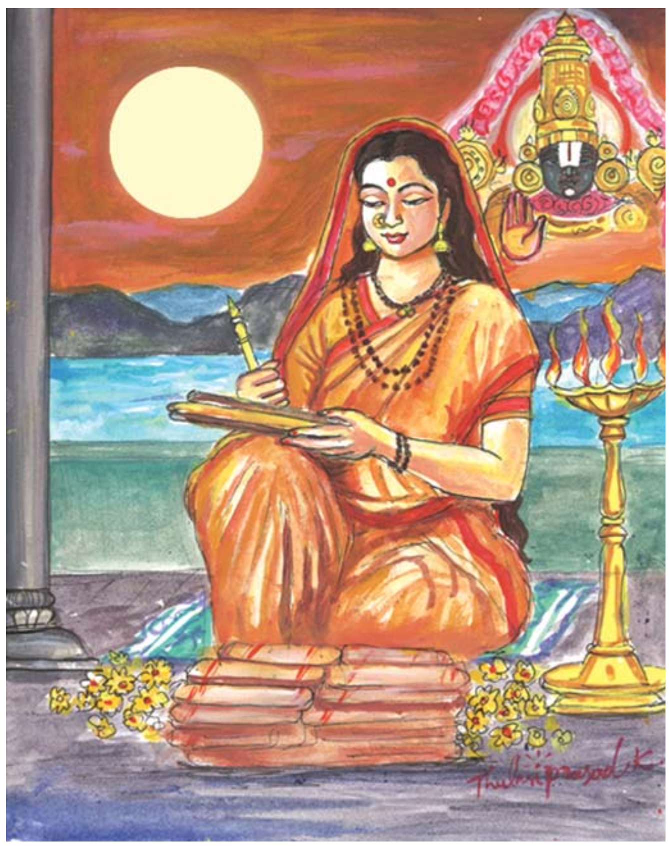

मंदिर की तरफ से मकान का बंदोबस्त कर, आश्रय दिया।

तब तक श्रीनिवास-परमात्मा के सन्निधान में, ताल्लपाका अन्नमाचार्यजी की संततिवाले 'संकीर्त्तनाचार्य' के अनुवंशिक पद पर विराजमान थे।

उस परिवार के लोगों ने वेंगमांबा को उचित ढंग से सम्मानित कर, अपने घर के ही बाजू में एक छोटे-से आवास-गृह का प्रभन्द कर दिया था।

वेंगमांबा पर एक आफत

अपने को तिरुमल-गिरि पर श्रीस्वामीजी के सन्निधान में मिले इस सत्कार से वेंगमांबा आराम से रह सकती थी, मगर उस पर एक आफत आ गिर गयी।

वेंगमांबा के पड़ोस में ''अक्काराम वेंकट्राम दीक्षित'' नामक एक आदमी रहता था। वह पहाड़ के अर्चक-समुदाय का मुखिया था, जो परम मूरख था।

उसके कारण वेंगमांबा को कुछ कष्ट झेलने पड़े, जिस कारण उसे अपनी आत्म-रक्षा के लिए तिरुमल छोड़ कर भाग जाना पड़ा।

इस कदर भाग कर वेंगमांबा 'तुंबुरुकोना' पहुँच गयी। तुंबुरुकोना तिरुमल दिव्य-क्षेत्र से लग-भग 10 मील की दूरी पर होने वाला स्थल था। घना जंगल था। वहाँ एक घनी गुफा में वह महिला अकेले अपना मान-संरक्षण करती हुई कई साल योग-साधना करती रही। घन-घोर तपो-साधना में वह तपती रही।

उस कठोर साधना से वेंगमांबा ने एक अपूर्व साक्षात्कार की अनुभूति पायी थी और उसे अपने जीवन-साधना का दर्शन हो पाया। उसे अपने जीवित-आदर्श का लक्ष्य गोचरित हो पाया। आज भी, यात्री तिरुमल दिव्य-धाम से 10 मील दूरी पर घन-घोर जंगल में स्थित उस गुफा का संदर्शन करने जाते, जो ''तरिगोंडा वेंगमांबा-गवि (गुफा)'' नाम से विख्यात है।

वेंगमांबा की कृतियाँ

वेंगमांबा ने काफी संघर्षणामय जीवन व्यतीत किया। नानृषिः कुरुते काव्यम्। जीवन के मंथन से, कठोर तपस्या से और निर्मम योग-साधना से वेंगमांबा ने साहित्यिक विचारधारा की परिपक्वता की शिखरायमान उत्तीर्णता पायी। उसकी रचनाओं में बेजोड़ कला-कुशलता निखर आयी। वेंगमांबा तुंबुरुकोना बंदीगृह छोड़ कर तिरुमल दिव्यधाम चली आयी। इस बार उसका भव्य स्वागत हो पाया।

तिरुमल दिव्यधाम में रह कर श्रीनिवास भगवान का जीवन-चित्रण उसने किया। ''श्री वेंकटाचल माहात्म्यम्'' उस तेलुगु-भाषा की कृति का नाम है, जिस में कलियुग में श्रीनिवास-भगवान का आविर्भाव, वकुलमाता से उसकी मुलाकात, नारायणवरम् के शासक राजा आकाश की अयोनिजा-पुत्री 'पद्मावतीदेवी' से संजोग एवं विवाह तथा तिरुमल-गिरियों में श्रीस्वामी का प्रस्थान और वैकुंठ-धाम समेत इन सप्त-गिरियों में रहते हुए अनाथ कलियुग का निरीक्षण करना - इत्यादि महत्तर घटनाओं का वर्णन है।

वैसे मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा के नाम-स्मरण से 'श्री वेंकटाचल माहात्म्यम्' की याद हो आती है, मगर, वेंगमांबा ने 'तरिगोंडा नृसिंहशतक', 'नारसिंह विलास कथा'(यक्षगान), 'शिवनाटकम्'(यक्षगान कथा), 'राजयोगामृत-सार'(द्विपद काव्य), 'बालकृष्ण-नाटक'(यक्षगान) आदि कृतियों की भी रचना की।

परिसमाप्ति

अपने निरासक्त जीवन-विफलता को माता ने कठोर तपो, योग-साधनाओं के जरिए मधुरमय साहित्यिक उद्यान में बदलकर, अनमोल फल-पुष्प-विराजित पुष्प-वाटिका में बदली है। उनका जीवन, उनकी साधना और साहिती-सृजन तेलुगु-भाषा-प्रेमियों के लिए अनमोल धन है। एक चिरस्थायी संपदा है।

श्री प्रपन्नामृतम्

(50वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

(गतांक से)

श्री कूरेश स्वामी का सुन्दरगिरि पर निवास

श्री कूरेशाचार्य स्वामी-जिनका दूसरा नाम श्रीवत्सचिह्न मिश्र भी था। एक समय श्रीरंगनाथ भगवान के दर्शनों के लिये गये। तब मन्दिर के द्वारपालों ने उनको बाहर ही रोक दिया। जब उन्होंने इसका कारण पूछा तो द्वारपाल बोले कि आप साधु पुरुष हैं, हमें आपको रोकना तो नहीं चाहिये था फिर भी इस अवरोध का कारण यह है कि यतिराज श्री रामानुजाचार्य श्रीरंगम् का त्याग करके कहीं चले गये हैं। अब उनके जाने के पश्चात् मंदिर के संचालकों ने ऐसा निश्चय किया कि राजा कृमिकण्ठ से मुख्य विरोध करने वाले, यतिराज ही थे। हमारे साथ तो राजा का कोई विरोध है नहीं। अतः राजा हमारे ऊपर नाराज न हो, इसके लिये यतिराज के जितने सम्बन्धी लोग हैं उनसे सम्पर्क तोड़ दिया जाय। अर्थात् उन लोगों को मंदिर में न आने दें। आज सभी पुजारियों ने ऐसा निर्णय किया है। यह कहकर द्वारपाल बोले कि यद्यपि पुजारियों ने यतिराज के किसी भी सम्बन्धी को मंदिर के भीतर नहीं आने देने का हमको आदेश दिया है, फिर भी आप तो महात्मा हैं, आप भीतर जा सकते हैं। यह कहकर द्वारपालों ने उनको मार्ग दे दिया। द्वारपालों के मुख से मन्दिर के संचालकों का निर्णय सुनकर श्री कूरेशाचार्य ने कहा कि यदि ऐसी ही बात है तो यतिराज श्री रामानुजाचार्य के सम्बन्ध से रहित उस रंगनाथ भगवान की सेवा एवं दर्शन मैं नहीं करना चाहता। ऐसा कहकर व्यथित मन से अपनी स्त्री, पुत्र, पुत्रियों को साथ लेकर श्रीरंगम् छोड़कर वृषभाचल पर चले गये।

विद्वान श्री कूरेशाचार्यजी ने वहाँ पहुँचकर भक्तिपूर्वक श्रीसुन्दरबाहु भगवान को सपरिवार प्रणाम किया और फिर कुछ समय तक सुखपूर्वक वहीं निवास करने लगे। वृषभाचल निवासकाल में आपने सुन्दरबाहुस्तव, अतिमानुष स्तव, श्रीवैकुण्ठस्तव, श्रीस्तव*- इन चार सुन्दर भक्ति-भावमय स्तोत्रों की रचना की। श्रीसुन्दरबाहु स्तव में आपने भगवान से प्रार्थना की है कि-

---

* उक्त ग्रन्थ पंचस्तवी के नाम से भी प्रसिद्ध हैं जो प्रकाशित एवं प्राप्तव्य हैं।

विज्ञापनां वनगिरीश्वर सत्यरूपामंगीकुरुष्व करुणार्णव मामकीनाम्।
श्रीरंगधाम्नि च यथा पुरमेव सोऽहं रामानुजाचार्यवाशगः परिवर्तयिष्ये।।

(प०अ०-50 श्लोक 15)

हे वनगिरीश्वर, कृपासागर! मेरे इस सत्यस्वरूप विज्ञापन को स्वीकार कीजिये। जिससे मैं भगवान श्री रामानुजाचार्य के आधीन रहकर पहिले की भाँति सदैव श्रीरंगधाम में सानन्द निवास करूँ। ऐसी प्रार्थना करते हुये आप वहाँ सुखपूर्वक ठहर गये।

उस समय श्री गोष्ठीपुरी में रहते हुए श्री गोष्ठीपूर्णाचार्यजी जिनके पास यतिराज श्री रामानुजाचार्य रहस्यार्थ के लिये अठारह बार गये थे। उनकी अवस्था 105 वर्ष की हो गई थी, वृद्धावस्था के कारण शरीर अशक्त हो गया था, ऐसी स्थिति देखकर

एक दिन आपके सभी श्रीवैष्णव शिष्यों ने आपको विचारमग्न देखकर इसका कारण पूछा- हे भगवान्! आप आज क्या सोच रहे हैं? अपनी इस लीला विभूति में निवास के अंतिम काल में श्री यामुनाचार्य स्वामी के चरण युगल ही मुझे रक्षक लगते है।

यह कहते हुए अपने आचार्य श्री यामुनाचार्य स्वामीजी का ध्यान करते हुये श्री गोष्ठीपूर्णाचार्य स्वामीजी वैकुण्ठधाम पधार गये। आपके वियोग में सभी शिष्य-समुदाय को अत्यन्त ही दुःख हुआ और फिर आपके सुपुत्र श्रीमन्नारायणाचार्य स्वामी ने श्रीवैष्णव ब्रह्ममेघ विधिपूर्वक आपका अन्त्येष्टि* संस्कार संपन्न करवाया।

यतिराज श्री रामानुजाचार्य द्वारा श्रीकूरेश को आश्वासन देने के लिये यादवाद्रि से भेजे गये दोनों श्रीवैष्णव महात्मा श्रीरंगम् पहुँचे और वहाँ पर श्री कूरेशाचार्य द्वारा श्रीरंगम् त्यागने का वृत्तान्त सुनकर उनके पास सुंदरगिरि पर आये। यहाँ भगवान् सुन्दरबाहु के पवित्र क्षेत्र में महात्मा श्री कूरेशाचार्य के दर्शन कर उन दोनों श्रीवैष्णवों ने साष्टांग प्रणाम किया और फिर यतिराज के द्वारा प्रेषित सान्त्वना सन्देश एवं उनका कुशल वृत्तान्त और यादवाद्रि के समस्त समाचार सुनाये। तत्पश्चात् उन्होंने फिर कहा कि यतिराज श्री रामानुजाचार्य अपने गुरु श्री महापूर्णाचार्य के वियोग से और आपके नेत्रहीन हो जाने के दुःख से यादवाद्रि पर अत्यन्त दुःखित होकर निवास कर रहे हैं।

उपरोक्त सम्वाद और अपने ऊपर यतिराज के स्नेह की बात सुनकर श्री कूरेशाचार्य आनन्दाश्रु बहाने लगे और आगन्तुक श्रीवैष्णवों से बोले कि जगद्गुरु यतिराज श्री रामानुजाचार्य सुखपूर्वक इस लीला विभूति में विराजमान हैं, यही मेरे लिये परम आनन्ददायक समाचार है यह कहकर अत्यन्त आनन्द से गुरुदेव यतिराज श्री रामानुजाचार्य के पास से आये हुये इन दोनों आगन्तुक श्रीवैष्णवों को ही उन्होंने प्रेमवश यतिराज मानकर स्वागत सत्कार कर अपने को कृतार्थ माना।

।।श्री प्रपन्नामृत का 50वाँ अध्याय पूर्ण हुआ।।

क्रमशः

* श्रीवैष्णवों की अंत्येष्टि की विधि श्रीवैकुण्ठचन्द्रिका नामक पुस्तक में प्राप्त है।

यज्ञोपवीत की महिमा

- श्री वेमुनूरि राजमौलि

वैदिक-संस्कारों से परिचित प्रत्येक व्यक्ति ''यज्ञोपवीत'' की महिमा जानता ही है। तेलुगु में इसे ''जन्ध्यं'' कहते हैं। अनेकों लोगों के गलों में यह लटकता रहता है। किन्तु बहुत से लोग यह नहीं जानते कि यह गले में क्यों लटकाया जाता है। कुछ लोग बड़ी निष्ठा के साथ अपने गले में यज्ञोपवीत का धारण करते हैं तो कुछ लोग आचार का नियम बनाये रखने के उद्देश्य से, कुछ और लोग दूसरों के सामने प्रदर्शित करने के लिए तो कुछ अन्य लोग आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया करते हैं, ऐसे लोग हमें नजर आते ही रहते हैं।

यज्ञोपवीत को 'ब्रह्मसूत्र' भी कहते हैं। इसका धारण क्यों करना चाहिए-निम्न प्रकार से धर्म-शास्त्र बता रहे हैं।

सूचनात् ब्रह्मतत्त्वस्य वेदतत्त्वस्य सूचनात्।

चतुस्सूत्रमुपवीतत्त्वात् ब्रह्मसूत्रमिति सूत्रम्।।

ब्रह्मतत्त्व तथा वेदतत्त्व को सूचित करने के लिए ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) का धारण करना चाहिए। वही 'उपवीत' है याने रक्षा-वस्त्र है। यज्ञोपवीत तथा शिखा (चोटी) अवश्य धारण करनी चाहिए, ऐसा स्मृतियाँ बताती हैं।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं।

प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।।

यज्ञोपवीत परम पवित्र का है। प्रजापति ब्रह्म के साथ मिलकर यह पैदा हुआ, ऐसा मंत्र का अर्थ है। यज्ञोपवीत का निर्माण नौ तन्तुओं से (धागे के नौ तंतु) करना चाहिए। प्रत्येक तन्तु का एक-एक देवता रहता है, ऐसा स्मृतियों का कथन है।

ओंकारो होग्निश्च नागश्च सोमः पितृ प्रजापती

वायुः सूर्यश्च सर्वश्च तस्तुदेवा अमी नव

ओंकारः प्रथमे तन्तौ द्वितीयो हूग्निस्थ दैव च

तृतीय नाग दैवत्यं चतुर्थे सोमदेवता

पंचमे पितृदैवत्यं षष्ठीचैव प्रजापतिः

सप्तम मारुतश्चैव अष्टमे सूर्य एव च

सर्वे देवास्तु नवमे इत्येतास्तंतु देवताः।

प्रथम तन्तु में ओंकार, दूसरे तन्तु में अग्निदेव, तृतीय तन्तु में नागदेवता, चौथे तन्तु में सोमदेवता, पाँचवें धागे में

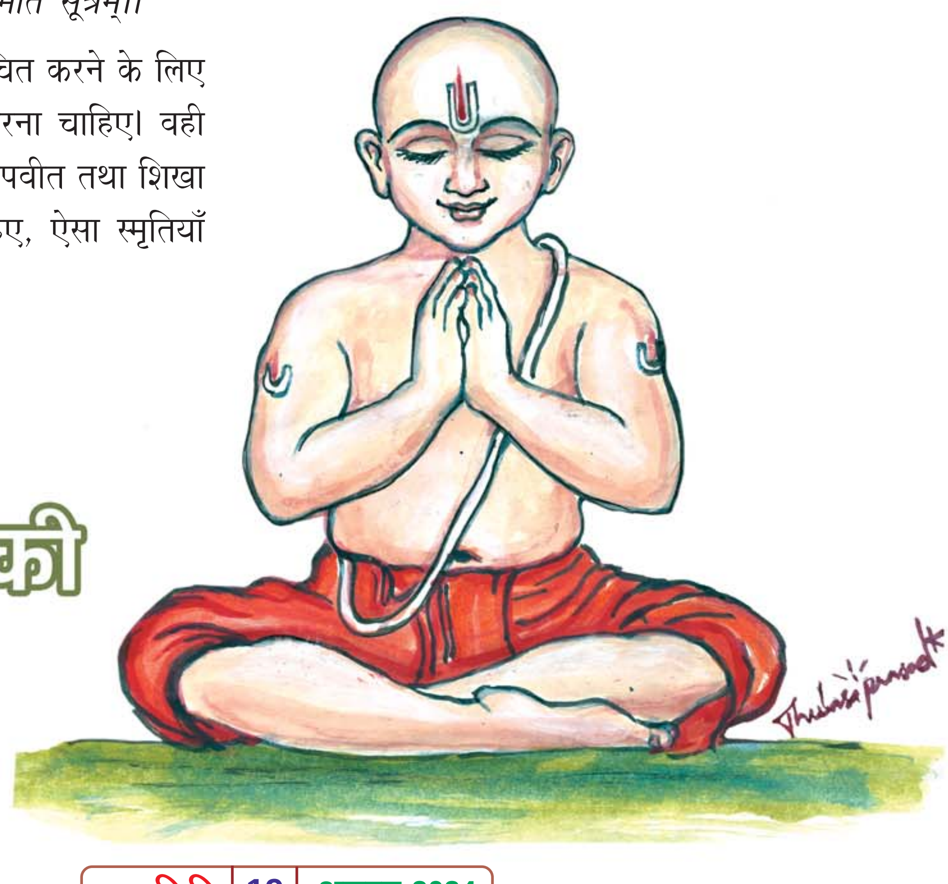

पितृ देवता, छटवें तन्तु में ब्रह्मदेव, सातवें धागे में वायुदेव, अष्टम तन्तु में सूर्य तथा नौवें तन्तु में शेष देवताएँ रहते हैं, ऐसा इस श्लोक का परमार्थ है।

यज्ञोपवीत सिर्फ तन्तु-समुदाय ही नहीं है, वह तो छियानबे विषयों का प्रतीक है, ऐसा सामवेद छांदोग्य-परिशिष्ट बताता है।

तिथिवारं च नक्षत्रं तत्त्ववेदगुणान्वितम्।
कालत्रयं च मासाश्च ब्रह्म सूत्रं हि षण्णवम्।।

इस श्लोक का अर्थ यह है - इसमें पन्द्रह तिथियाँ, सात वार, सत्ताईस नक्षत्र, पच्चीस तत्त्व, चार वेद, तीन गुण (सत्त्वरजस्तमोगुण), तीन काल (भूतभविष्यत् वर्तमान), बारह महीने, कुल मिलाकर छियानबे विषय भरे रहते हैं। इसका अर्थ है - यज्ञोपवीत-धारण करने वालों को तिथियों, वारों, नक्षत्रों, तत्त्वों, वेदों, गुणों, कालों तथा मासों से पवित्रता प्राप्त होती है तथा धारण करने वालों को शुभ-फल पहुँचते हैं। यज्ञोपवीत छियानबे मापों से मिलकर रहना चाहिए, ऐसा वशिष्ठ सृति बताता है।

चतुर्वेदेशु गायत्री चतुर्विंशतिकाक्षरी।
तस्माच्चतुर्गुणं कृत्वा ब्रह्मतन्तुमुदीरयेती।।

चार वेदों में भी गायत्री-मंत्र का उपदेश चौबीस अक्षरों में दिया गया। इसलिए उस मंत्र के अक्षरों की संख्या से चार गुणा अर्थात् (24x4=96) छियानबे तंतुओं से निर्मित यज्ञोपवीत का धारण करना चाहिए। गायत्री-मंत्र स्वीकारते समय धारण करने वाली चीज 'यज्ञोपवीत' है। अतः गायत्री-मंत्राक्षरों के चार गुणा से युक्त तन्तु रहने चाहिए, ऐसा इसका तात्पर्य है। यज्ञोपवीत, किस परिमाण में तैयार करना है, सामुद्रिक-शास्त्र स्पष्ट प्रबोधित करता है।

पृष्टदेशी च नाभ्यां च धृतं यद्विन्दते कटिम्।
तद्धार्यमुपवीतं स्यात्नातिलंबं नचोच्छ्रितम्।।

आयुर्हरत्यति ह्रस्वं अति दीर्घं तपोहरम्।
यशोहरत्यति स्थूलं अति सूक्ष्मं धनावहम्।।

यज्ञोपवीत कटि तक ही लटकता रहना चाहिए। उसके ऊपर तक अथवा नीचे तक रहना ठीक नहीं है। पूरी तरह छोटा रहे तो आयु घटती है। ज्यादा लंबा हो तो किये हुए तप का नाश होता है। मोटा रहे तो कीर्ति का अन्त होता है। बिल्कुल बारीक रहे तो धन का नाश होता है। ब्रह्मचारी को एक यज्ञोपवीत, तथा गृहस्थ को दो यज्ञोपवीतों का धारण करना चाहिए। उत्तरीय के बदले में इन दोनों को एक और यज्ञोपवीतों का धारण करना होगा। छः महीने का समय बीतते ही यज्ञोपवीत जीर्ण होता है। इसलिए छः महीने में एक बार नये यज्ञोपवीत धारण करके पुराने यज्ञोपवीत का विसर्जन करना चाहिए। यज्ञोपवीत-धारण के समय तथा निकालते वक्त, निर्दिष्ट मंत्रों का पठन अवश्य करना चाहिए। मंत्र-पठन के बिना यज्ञोपवीत-धारण तथा विसर्जन नहीं करना चाहिए। अशौचों (आप्त जनों के जनन व मरण) के समय तथा अन्य अमंगलों के अवसर पर अवश्य यज्ञोपवीतों को बदल देना चाहिए। परिहास (तमाशा) के लिए धारण नहीं करना चाहिए अथवा अन्य चीजों को उससे बान्धकर अपवित्र करना नहीं चाहिए। वैसा करे तो समस्त पाप घेर लेते हैं। कहने की एक ही एक बात यह है कि यज्ञोपवीत के तन्तु(धागे) हमारे शिर की प्राण-नाड़ियाँ हैं। जिस प्रकार प्राण-नाडियों की रक्षा कर लेते हैं, उसी प्रकार बड़ी श्रद्धा के साथ यज्ञोपवीत तन्तुओं की रक्षाकर लेनी चाहिए।

यज्ञोपवीत मानव के श्रेयस के लिए काम आना चाहिए न कि प्रदर्शन मात्र के लिए। प्रदर्शन के लिए धारण नहीं करना चाहिए, बल्कि धर्माचरण केलिए धारण करना चाहिए। यही यज्ञोपवीत की महिमा है।

(गतांक से)

श्रीवैष्णव दिव्यदेश-108

- श्रीमती विजया कमलकिशोर तापडिया

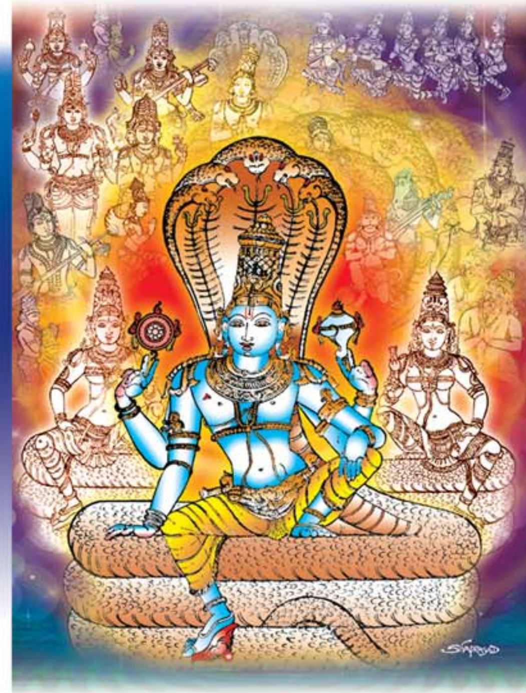

60) तिरुवल्लिक्केणि - (बृन्दारण्य क्षेत्र)

(चेन्नै शहर में।) यह मंदिर चेन्नै सेन्ट्रल स्टेशन से 6 कि.मी. पर है। सब तरह की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। यहाँ पाँच सन्निधियाँ हैं।

मूलमूर्ति - वेंकटकृष्णन। रुक्मिणी समेत बलराम, सात्यकी, अनिरुद्ध एवं प्रद्युम्न आदि के साथ, पूर्वाभिमुखी खडे दर्शन देते हैं। सिर्फ यहीं पर श्रीकृष्ण सकुटुंब दर्शन देते हैं।

उत्सवर - श्री पार्थसारथी।

मूलमूर्ति - रंगनाथन, मन्नाथन। पूर्वाभिमुखी भुजंग शयन।

तायार (माताजी) - वेदवल्लि (अलग सन्निधि)।

मूलमूर्ति - सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान समेत पश्चिमाभिमुखी - श्रीरामचन्द्र दर्शन देते हैं।

उत्सवमूर्ति - सीता, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान समेत पश्चिमाभिमुखी - श्रीरामचन्द्र दर्शन देते हैं।

वरदराजन - देवपेरुमाल - पूर्वाभिमुखी, गरुडारूड गजेन्द्रवरदन दर्शन।

उत्सवर - पूर्वाभिमुखी खडे दर्शन।

मूलमूर्ति - तेळिळय सिंगर (नरसिंहन) पश्चिमाभिमुखी योगनृसिंह के रूप में दर्शन देते हैं।

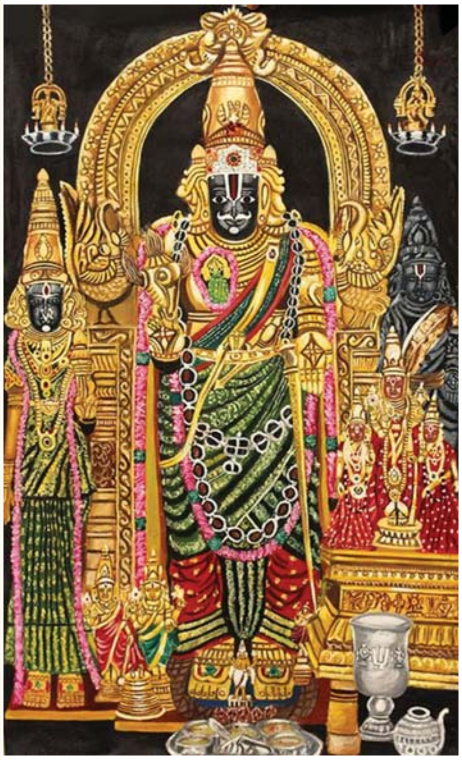

उत्सवर - पश्चिमाभिमुखी खडे दर्शन देते हैं।

आण्डाल के लिए अलग सन्निधि है। आल्वार रामानुज, स्वामी देशिक, वरवरमुनि की अलग सन्निधियाँ हैं।

तीर्थ - कैरविणी सरस, (अल्लिक्केणि) अळ्ळि - कैरव।

विमान - आनन्द विमान, प्रणव विमान, पुष्पक विमान, शेष विमान, दैविक विमान।

प्रत्यक्ष - तोण्डैमान्, सुमतिराजन, अर्जुन, भृगु महर्षि, मार्कण्डेय, अत्रि महर्षि, जापालि महर्षि, अनिरुद्ध, प्रद्युम्न।

विशेष - तिरुमंगै आल्वार ने पांचों सन्निधियों के भगवान के मंगलाशासन किये हैं। यहाँ बताया जाता है कि तिरुवेंकट भगवान ही कण्णन; पार्थसारथी के रूप में दर्शन देते हैं। वेंकटकृष्णन् का नाम भी है। यहाँ वैखानस आगम पद्धति का अनुकरण किया जाता है। मूलमूर्ति के दो हाथ हैं। दाएं हाथ में शंख, बाएं हाथ में दंड (छड़ि)। अपनी कुल रीति के अनुसार बड़ी मूँछ है।

सुमति नायक राजा को यहाँ तिरुमल/तिरुपति वेंकटेश भगवान ने वेंकटकृष्णन् के रूप में दर्शन दिये। इसे दूसरा तिरुपति कहते हैं।

मंगलाशासन - 3 आल्वार कुल 12 दिव्य पद।

यहाँ से 2 मील पर मैलापूर है जो पेयाल्वार का अवतार स्थल है। मैलापुर में तीन प्रसिद्ध वैष्णव मंदिर है। 1. श्रीनिवास भगवान जहाँ विराजमान है उसे देशिक मंदिर कहते हैं। यहाँ हयग्रीव एवं श्री वेदान्तदेशिकन विराजमान है। 2. केशव पेरुमाल मंदिर, 3. माधव पेरुमाल मंदिर। तिरुवल्लिक्केणि एवं मैलापुर दो अलग-अलग मोहल्ला होने पर भी पहले मइलै - तिरुवल्लिक्केणि कहते थे। मइलै में शिव मंदिर कपालीश्वर, करपगांबाल है।

प्रतिवर्ष 63 नायनमारों का उत्सव बडे पैमाने पर मनाया जाता है। आल्वारों की तरह नायनमारों ने शैवमंदिर के भगवान के बारे में गाया।

61) तिरुनीरमलै - (तोयाद्रि क्षेत्र)

चेन्नै - तांबरम - चेंगलपट - रेल मार्ग में पल्लावरम स्टेशन से 6 कि.मी. पर है। चेन्नै से स्थानीय बस आदि की सुविधाए हैं। यहाँ मंदिर के सामने छोटी-सी पहाडी है। जिस पर चार सन्निधियाँ है। पहाडी तल का मंदिर है।

मूलमूर्ति - नीरवण्णन्, नीलमुहिलवण्णन्, पूर्वाभिमुखी खडे दर्शन देते हैं।

तायार (माताजी) - अणिमामलर मंगै (अलग सन्निधि)।

राम की एक सन्निधि है - पूर्वाभिमुखी (यहाँ पहाडी पर के मंदिर)।

मूलमूर्ति - शांत नरसिंहन, पूर्वाभिमुखी, आसीनस्थ दर्शन देते हैं।

मूलमूर्ति - रंगनाथन - पश्चिमाभिमुखी माणिक्क शयन।

तायार (माताजी) - रंगनायकी (अलग सन्निधि) पूर्वाभिमुखी, आसीनस्थ।

मूलवर - तिरुविक्रमन - पूर्वाभिमुखी खडे दर्शन देते हैं यहाँ चार रूपों में दर्शन देते है। १) निण्ड्रान - खडे, २) इरुन्दान-बैठासीनस्थ, ३) किडन्दान - शयनित, ४) नडन्दान - चलते हुए।

तीर्थ - मणिकर्णिक पुष्करिणी, क्षीर पुष्करिणी, कारुण्य पुष्करिणी, सिद्ध पुष्करिणी, स्वर्ण पुष्करिणी।

विमान - तोयागिरि विमान।

प्रत्यक्ष - तोण्डैमान, भृगु, मार्कण्डेय।

विशेष - वाल्मीकि महर्षि यहाँ पधारे थे। विभिन्न रूपों में भगवान के दर्शन किए। उनकी प्रार्थना के अनुसार नीरवण्णन के रूप में दर्शन देते हैं। पुराणों में इसका उल्लेख है कि तिरुमंगै आल्वार जब यहाँ दर्शन के लिए पधारे तब इस पहाड के चारों ओर - पानी से भरा था (अरण् अकिळ्) छः महान तपस्या करते हुए प्रतीक्षा की। इसलिए इसका नाम - नीरमलै - तिरुनीरमलै पडा। आल्वार जहाँ ठहरे हुए थे तिरुमंगै आल्वारपुर कहते हैं। निकट कुण्ड्रत्तूर में प्राचीन मंदिर तिरुऊरह पेरुमाल कोइल है।

मंगलाशासन - दो आल्वार - 20 दिव्य पद। (आठ रचया व्यक्त क्षेत्र में एक है।)

क्रमशः

कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्

तेलुगु मूल - श्री कोलनुपाक मुरलीधर राव
हिन्दी अनुवाद - श्रीमती वी.केदारम्मा

पूरे भारत देश के हिन्दू लोग बड़ी श्रद्धा व भक्ति के साथ मनाने वाला त्यौहार ''कृष्णाष्टमी'' है। आसेतु हिमाचल पर्यन्त जन्माष्टमी के उत्सव बडे धूमधडक्का के साथ मनाये जाते हैं। केवल भारत में ही नहीं, संसार भर के अनेकों देशों में कृष्णभक्ति प्रवृद्ध हो रही है। इसी के अंतर्गत कइयों विदेशी लोग कृष्ण लीलामृत का आस्वादन करते ''कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्'' कहकर घोषित कर रहे हैं।

कृष्ण परमात्मा साक्षात् श्रीमन्नारायण का अवतार है। द्वापरयुग में राक्षस-संहार एवं राजकीय राक्षसत्व का अन्त करने अवतरित हुए श्री महाविष्णु हैं।

दशावतारों में से कृष्णावतार ने बहुल प्रचार को प्राप्त किया। शृंगार के साथ-साथ अखंड चतुरता से भारत युद्ध में भाग लेनेवाले अवतारमूर्ति, गीता गोविन्द हैं।

त्रेतायुग में श्रीरामचन्द्र ने दुष्ट दलन के लिए अवतरित होकर मानवालि का उद्धार किया। त्रेतायुग का राजकीय, सामाजिक, प्रजा-जीवन; एक ही वचन, एक ही बाण, एक ही धर्म पर टिका हुआ था। अब द्वापरयुग में भारत देश में आर्य और अनार्य का सम्मिलन नाना रूपों में व्याप्त था। विविध आचार-व्यवहारों के कारण समाज में अराजकता व्याप्त हुई। इतना ही नहीं, स्वार्थपरता, विलास-प्रवृत्ति, राक्षस-संस्कृति बढ़ गयी। पालकों में लालच पैदा हुई। साधारण जनता की सुरक्षा लुप्त हुई। 'यथा राजा तथा प्रजा' की भाँति धर्म-मार्ग छोड़कर जनता चल रही थी। पाशविकता, विलासिता, अपरिमित अहंकार से बर्ताव कर रही थी। समाज-धर्म के विद्वेषियों और धर्म-विमुख लोगों की संख्या दिनों दिन बढती जा रही थी। उस समय वेद-वांगमय पर अव्यवस्थिता बनी हुई थी। आमतौर पर तीव्र संक्षोभ की स्थिति पैदा हुई।

संभवामि युगे-युगे :

इस संक्षोभ का सुधार साधारण जनता कर नहीं सकती है। अधर्म को दूर करके धर्म की स्थापना करना चाहे तो असाधारण व्यक्ति से ही संभव हो सकता है। दुष्ट-शिक्षण, शिष्ट-रक्षण करके धर्म का पुनरुद्धरण करने विलक्षण व्यक्ति का अवतरण होना चाहिए। संकट स्थितियाँ घेर लेने के समय द्वापरयुग में धर्म की संस्थापना हेतु, सामाजिक परक महा अभियान चलाने वाले अवतार पुरुष श्रीकृष्ण थे। 'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युग युगे' नामक गीता-श्लोक श्रीकृष्णावतार के प्रयोजन का विवरण देता है। उन महात्मा श्रीकृष्ण के उद्यम् का परमार्थ महान व्यक्ति ही नहीं जान सकता तो हमारी हैसियत ही क्या है?

हर उद्यम में दो भाग होते हैं; धर्म और आचरण। पवित्रता, आचरण, स्वच्छता के लिए बराबर प्रधानता रहने पर ही धर्म स्थिर बना रहता है। त्रेतायुग में

श्रीरामचंद्र का जीवन इसका सुंदर उदाहरण है। किन्तु द्वापरयुग तक व्यक्तियों की प्रवृत्तियाँ, सामाजिक परिस्थितियाँ; राजनैतिक परिस्थितियों के कारण पूरी तरह बदल गयीं। इन परिस्थितियों को सुधार के लिए श्रीकृष्ण परमात्मा ने अनेकों लीलाएँ रचीं। कुरुक्षेत्र संग्राम में द्रोण के पतन के लिए धर्मराज के मुख से असत्य वचन कह लाया। प्राणरक्षा के समय असत्य बोलना दोष नहीं कहलाता; ऐसा उन्होंने घोषित किया। भीम के द्वारा दुर्योधन के वध की घटना के अवसर पर धर्म की स्थापना के विषय में जरा धर्म का पालन किया। इससे पहले कंस, नरकासुर, बाणासुर, शिशुपाल इत्यादि दुष्टों का दलन स्वयं उन्होंने ही किया। मायावी दुष्टों का दलन माया के प्रयोग से ही किया।

गीताचार्य :

कोदंडराम की भांति श्रीकृष्ण ने अपने चक्र का उपयोग प्रजा-श्रेय एवं दुष्ट-संहार के लिए ही किया। उत्तरभारत में अधर्म, अराजकता, दुष्ट-शक्तियों का बोलबाला था। ऐसी हालत में राजनैतिक धुरंधर श्रीकृष्ण, धर्मपरायण पांडवों के पक्ष रहे। कष्ट-समय में उनके पक्ष में रहकर अपने बुद्धि बल और चतुरता से आचरण योग्य सामाजिक-जिम्मेदारी निभाने प्रेरित किया। महान् व्यक्तित्व, चतुर राजनीतिज्ञता अपनाकर युग-धर्म का पालन किया। कुरुक्षेत्र-संग्राम की वेला में विजय के सारथी बने। कुरु-पांडवों के कलह को धर्म-संस्थापन के लिए अपने अनुकूल बनाया।

महासंग्राम के समय निस्पृह के कारण अर्जुन भीर बनकर कर्तव्य-च्युत होने के अवसर पर नर केलिए नारायण बनकर कर्तव्य-पालन का उपदेश दिया। गीतामृत प्रदान करके गीताचार्य बने। श्रीकृष्ण परमात्मा एक बार उदक के आश्रम पर पहुँचे। उदक महामुनि, भगवान पर शंकित हुआ। कुरुक्षेत्र-संग्राम का मूल-कारण श्रीकृष्ण

ही है; ऐसा उसने दोषारोपन किया। कृष्ण भगवान ने महाभारत-संग्राम की आवश्यकता का विवरण देकर अपना विश्वरूप भी प्रदर्शित करके उस मुनि का अज्ञान दूर किया।

धर्म-पक्षी :

योगीश्वर के रूप में श्रीकृष्ण ने अपनी अति मानुष-शक्ति परीक्षित को प्राण-दान के रूप में प्रदान की। उस समय यादव लोगों ने भी अहंकारी बनकर व्यवहृत किया। मद्यपान के वशीभूत हो मदोन्मत्त होनेवालों के तत्त्व ने महनीय व्यक्ति श्रीकृष्ण को बड़ी मनो-व्यथा पहुँचायी। पूर्ण रूप से धर्म की स्थापना होने के लिए उनकी आड भी दूर होनी चाहिए; ऐसा श्रीकृष्ण परमात्मा ने ग्रहण किया। ऐसा करने पर ही अपने महाउद्यम की पूर्ति होगी। ऐसा उन्होंने भाषित किया। मुनि का और गांधारी का शाप, दोनों मिलकर आने की वेला में... यादवों के बीच अंतःकलह, प्रारंभ होकर एक दूसरे का वध कर लेने पर भी श्रीकृष्ण चुपचाप ही रहे। अंत में आपने भी एक शिकारी का शर-स्वीकार करके अपने अवतार की परिसमाप्ति कर ली।

जहाँ धर्म रहता, वहाँ वासुदेव रहते हैं; ऐसा भीष्म और द्रोण ने अनेकों बार प्रस्तावित किया। ''यतो धर्मः ततो कृष्णः यतः कृष्णः ततो जयः।'' कभी-कभी मानवों के मध्य महात्माओं का जन्म होता है। वे महान् कार्यों का निर्वहण करते हैं। अपनी आवश्यकता की पूर्ति होते ही अवतार की परिसमाप्ति करते हैं। उनके जीवन मानवों के लिए ज्ञान-दीपिकाएँ है; आचरणीय हैं।

श्रीकृष्ण का स्मरण करते तर जाऊँगा; ऐसा भावित करने वाले भक्तजनों के दांडिये, छीके फोड़ने की खुशियाँ, गँवारू लोगों के हृदय में उमड़नेवाले वेणुगान (स्वर) इत्यादि श्रीकृष्ण का लीलामृत ही है। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर आनन्दलील, श्रीकृष्ण के नाम-स्मरण में धन्यभागी बने।

ॐ श्रीकृष्णाय नमः।

सितंबर 2024

05 श्री बलराम जयंती,
श्री वराह जयंती
07 श्री गणेश चतुर्थी
08 ऋषिपंचमी
15 श्री वामन जयंती
15-18 तिरुचानूर श्री पद्मावतीदेवी का पवित्रोत्सव
17 श्री अनंतपद्मनाभव्रत

गोपूजा विधान

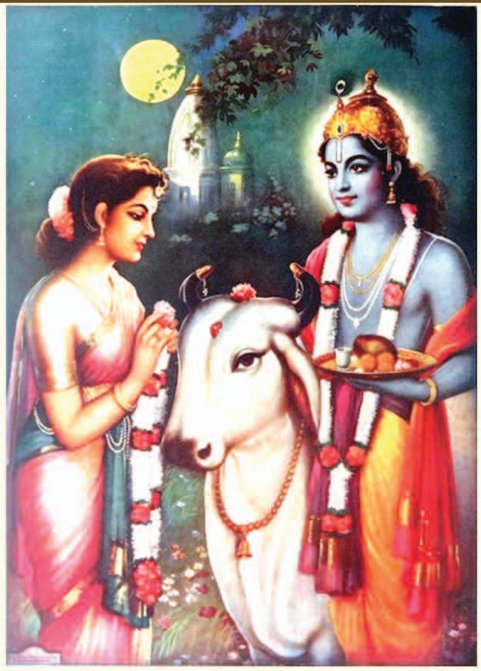

सनातन हैंदव सांप्रदाय में गाय को विशिष्ट स्थान है। गोमाता सकलदेवता स्वरूप है। जो लोग गोमाता को पूजा करते हैं - उनको सत्संतान, सौभाग्य, ज्ञान व मोक्ष प्राप्त होता है। गाय की पूजा का मतलब साक्षात् श्रीकृष्ण की पूजा फल मिलता है। राहू ग्रह का अधिदेवता गाय है। इसलिए गोपूजा सर्वग्रह पीडा निवारक है। इसलिए 'गोकुलाष्टमी' के संदर्भ में 'गोपूजा विधान' सप्तगिरि पाठकों के लिए...

सूचना : प्रत्यक्ष रूप में या विग्रह रूप में... यहाँ निम्न सूचित विधान में गोपूजा कर सकता है। (पहला दीपाराधन करना है। तदनंतर गोमाता को ऐसा प्रार्थना करना चाहिए।)

गोमाता प्रार्थना

॥श्लो॥ नमो ब्रह्मण्यदेवाय, गो ब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविंदाय नमो नमः॥

॥श्लो॥ घृत क्षीर प्रदा गावो घृतयोन्यो घृतोद्भवाः।
घृतनद्यो मृतावर्ताः, ता मे संतु सदा गृहे॥

॥श्लो॥ गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एवच।
गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वह्ा म्यहम्॥

(ऐसा प्रार्थना करने के बाद - आचमन करके, प्राणायामम्, संकल्प माने देशकालाधिक को पठन कर, गोत्र नाम को बताने के बाद...) 'मम श्रुति स्मृति पुराणोक्त सर्वफल प्राप्त्यर्थं, सर्वपीडा परिहारार्थं ज्ञानप्राप्ति द्वारा मोक्ष फलावाप्त्यर्थं, अखंडित सुख सौभाग्य संत त्यायुरारोग्य, ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं, कल्पोक्त प्रकारेण गो पूजां करिष्ये॥' (ऐसा कहकर, गोमाता को पुष्प, अक्षत समर्पण करके नमस्कार करना चाहिए।) (तदनंतर कलश पूजा, गणपति पूजा करना चाहिए।) (गणपति पूजा अनंतर, पुष्प, अक्षत लेकर, यहाँ निम्न सूचित के अनुसार गोमाता को ध्यान कर, बाद में पुष्प व अक्षत को गोचरणों में समर्पण करके नमस्कार करना चाहिए।)

ध्यान

॥श्लो॥ नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

॥श्लो॥ गवा मंगेषु तिष्ठंति भुवनानि चतुर्दश।
यस्मात्तस्मा च्छिवं मे स्यादिहलोके परत्रच॥

श्री गोमात्रे नमः ध्यानं समर्पयामी।

आवाहन

॥श्लो॥ आगच्छ देवी कल्याणि! शुभां पूजां गृहाण च।
वत्सेन सहितां त्वा-हं देवी मावाहया म्यहम्॥

श्री गोमात्रे नमः आवाहन समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, पुष्प, अक्षत को समर्पण करके नमस्कार करना चाहिए।)

आसन

॥श्लो॥ नानारत्न समायुक्तं कार्तस्वर विभूषितम्।
आसनं ते मया दत्तं गृहाण जगदंबिके॥

श्री गोमात्रे नमः दिव्य सिंहासनं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, पुष्प, अक्षत समर्पण करके, नमस्कार करना चाहिए।)

पाद्य

॥श्लो॥ सौरभेयी! सर्वहिते! पवित्रे! पापनाशिनि!
गृह्ण ष्वैत न्मया दत्तं पाद्यं त्रैलोक्यवंदिते!

श्री गोमात्रे नमः पाद्यं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, कलश के जल को उद्धरिणी में लेकर, गोचरणों को धोना है।)

अर्घ्य

॥श्लो॥ सर्वदेवमये! देवी! सर्वतीर्थमये! शुभे!
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं सौरभेयी! नमो-स्तुते!

श्री गोमात्रे नमः अर्घ्यं समर्पयामी।

(कलश के जल को उद्धरिणी में लेकर, गोमाता के हस्त को धोने की भावना करके, अर्घ्य पात्र में छोड़ना चाहिए।)

आचमन

॥श्लो॥ देहस्थितास्ति रुद्राणी शंकरस्य सदा प्रिया।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

श्री गोमात्रे नमः मुखे आचमनीयं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, उद्धरिणी के पानी को गोमुख को तीन बार दिखाकर, अर्घ्य पात्र में छोड़ना चाहिए।)

स्नान

॥श्लो॥ या लक्ष्मीः सर्वलोकेशु याच देवे ष्ववस्थिता।
धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु॥

श्री गोमात्रे नमः स्नानं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, गोमाता या गोमाता के विग्रह को स्नान करना चाहिए।) (आवश्यकता के अनुसार ''श्रीसूक्तं'' कहकर, अभिषेक करना चाहिए।)

वस्त्र

॥श्लो॥ आच्छादनं गवे दद्यां सम्यक् शुद्धं सुशोभनम्।
सुरभि र्वस्त्रदानेन प्रीयतां परमेश्वरी।

श्री गोमात्रे नमः वस्त्रं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, गोमाता शरीर को पोंछो और वस्त्र को समर्पित करें।)

गंधं

॥श्लो॥ सर्वदेवमये देवी! चंदनं चंद्रसन्निभम्।
कस्तूरी कुंकुमाढ्यंच सुगंधं प्रतिगृह्यताम्॥

श्री गोमात्रे नमः दिव्य परिमल श्रीचंदनं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, श्रीगंधं को समर्पण कर, उनके ऊपर कुंकुम को भी समर्पित करना चाहिए।) (ऐसा चरण, मुख, सींगों, मूपुर व पूँछ को समर्पित करना चाहिए।)

अक्षत

॥श्लो॥ शालीयां श्चंद्रवर्णांश्च, हरिद्रामिश्रितान् शुभान्।
अक्षतां श्चार्पये तुभ्यं गृहाण जगदंबिके॥

श्री गोमात्रे नमः अलंकरणार्थं अक्षतान् समर्पयामी।

(अक्षत गाय पर रखकर, नमस्कार करना चाहिए।)

फूल माला

॥श्लो॥ तुलसी कुंदमंदार पारिजातांबुजै र्युताम्।
वनमालां प्रदास्यामि, गृहाण जगदीश्वरि॥

श्री गोमात्रे नमः पुष्पमालिकां समर्पयामी। (फूल माला गोमाता को समर्पण करके, नमस्कार करना है।)

(तदनंतर गोमाता शरीर में विविध स्थानों में हुए विविध देवतामूर्तियों को भावना करके, अंगपूजा करना है।)

(गोः सर्वांगेषु देवताह्वानम्)

गोपूजांगत्वेन गोः अंगेषु सर्वान् देवान् अवाहयामी
श्रृंगमूलयोः - ब्रह्म-विष्णू आवाहयामी (श्रृंगों के मूल)
श्रृंगाग्रयोः - सर्वतीर्थाणि आवाहयामी (श्रृंगों के अंतिम भाग)
ललाटे - महादेवं आवाहयामी (ललाट)
ललाटाग्रे - महादेवं आवाहयामी (ललाट के ऊपरी भाग)
नासा दंडे - षण्मुखं आवाहयामी (नाक के भाग)
कर्णयोः - अश्विनौ आवाहयामी (कान)
चक्षुषोः - शशि भास्करौ आवाहयामी (आँख)
जिह्वायां - वरुणं आवाहयामी (जिह्वा)
हुंकारे - सरस्वतीं आवाहयामी (हुंकारं)
गंडयोर्मध्ये - धर्मं आवाहयामी (जबड़े)
ओष्ठयोः - संध्या द्वयं आवाहयामी (ओंठ)
ग्रीवायां - इंद्रं आवाहयामी (गरदन)
कुक्षिदेशे - रक्षांसि आवाहयामी (पेट)
उरसि - साध्यान् आवाहयामी (वक्षःस्थल)
चतुष्पादेषु - धर्मं आवाहयामी (चार पैर)
खुरमध्ये - गंधर्वान् आवाहयामी (खुरों के बीच)
खुराग्रे - पन्नगान् आवाहयामी (खुरों के अंतिम भाग)
खुर पार्श्वेषु - अप्सरसः आवाहयामी (खुरों की बगल)
पृष्ठे - एकादशरुद्रान् आवाहयामी (पिछला भाग)
सर्व संधिषु - वनून् आवाहयामी (अंग नहरें)
श्रोणितटे - पितृन् आवाहयामी (नितंब)
लांगूले - सोमम् आवाहयामी (पूँछ)
वाल रोमेषु - आदित्यरस्मीन् आवाहयामी (पूँछ के गुच्छे)
मूत्रे - गंगां आवाहयामी (गो पंचकं)
क्षीरे - सरस्वतीं आवाहयामी (दूध)
दध्नि - नर्मदां आवाहयामी (दही)
सर्पिषि - हुताशनं आवाहयामी (घी)
रोमसु - त्रयस्त्रिंशत्कोटिदेवान् आवाहयामी (केश)
उदरे - पृथिवीं आवाहयामी (पेट)
पयोधरेषु - सागरान् आवाहयामी (गाय का थन)
गोः सर्वांगेषु सर्वान् देवान् आवाहयामी

तदनंतर - अंगपूजा

नंदिन्ये नमः - गोः पादौ पूजयामी
जगदुत्पत्ति कारणायै नमः - गोः जानूनी पूजयामी
जगद्रक्षणायै नमः - गोः कटिं पूजयामी
पवित्रायै नमः - गोः कंठं पूजयामी
सुशीलायै नमः - गोः श्रृंगे पूजयामी
यज्ञसाधनायै नमः - गोः मुखं पूजयामी
विश्वस्याघ प्रणाशिन्यै नमः - गोः शिरः पूजयामी

(तदनंतर गो रहस्य नामावली से गोपूजा करना चाहिए।)

॥श्लो॥ तुलसी कुंद मंदार जाती पुन्नाग चंपकैः।
कदंब करवीरैश्च कुसुमै श्शतपत्रकैः॥

॥श्लो॥ नीलांबुजैः बिल्वपत्रैः चंपकैः रुद्र रूपिणि।
पूजयिष्यामहं भक्त्या संगृहा णाच्युतार्चिते॥

श्री गोमात्रे नमः पत्र-पुष्पैः पूजयामी।

(गोमाता रहस्य नामावली कहकर, पत्र-पुष्पों से गोपूजा करना चाहिए।)

गो रहस्य नामावली

ॐ श्रीकृष्णवल्लभायै नमः
ॐ कृष्णायै नमः
ॐ श्रीकृष्णपारिजातायै नमः
ॐ कृष्ण प्रियायै नमः
ॐ कृष्ण रूपायै नमः
ॐ कृष्ण प्रेम विवर्धिन्यै नमः
ॐ कमनीयायै नमः
ॐ कामधेनवे नमः
ॐ कल्याण्यै नमः
ॐ कल्यवंदितायै नमः 10
ॐ कल्पवृक्ष स्वरूपायै नमः
ॐ दिव्यकल्प समलंकृतायै नमः
ॐ क्षीरार्णवसुसंभूतायै नमः
ॐ क्षीरदायै नमः
ॐ क्षीररूपिण्यै नमः
ॐ नंदादि गोपविनुतायै नमः
ॐ नंदिन्यै नमः
ॐ नंदन प्रदायै नमः
ॐ ब्रह्मानंद विद्यायिनै नमः
ॐ सर्वदेवगण स्तुत्यायै नमः 20
ॐ सर्वधर्मस्वरूपिण्यै नमः
ॐ सर्वभूतावनरतायै नमः
ॐ सर्वदायै नमः
ॐ सर्वमोददायै नमः
ॐ शिष्टेष्टायै नमः
ॐ शिष्टवरदायै नमः
ॐ सृष्टिस्थितिलयात्मिकायै नमः
ॐ सुरभ्यै नमः
ॐ सौरभेय्यै नमः
ॐ सुरासुर नमस्कृतायै नमः 30
ॐ सिद्धिप्रदायै नमः
ॐ अभीष्टसिद्धि प्रवर्षिण्यै नमः
ॐ जगद्धितायै नमः
ॐ ब्रह्मपुत्र्यै नमः
ॐ गायत्र्यै नमः
ॐ एकहायन्यै नमः
ॐ गंधर्वादिसमाराध्यायै नमः
ॐ राधाहस्तो पलालितायै नमः
ॐ यज्ञांगायै नमः
ॐ यज्ञ फलदायै नमः 40
ॐ यज्ञेश्यै नमः
ॐ यज्ञरूपिण्यै नमः
ॐ हव्यकव्यप्रदायै नमः
ॐ श्रीदायै नमः
ॐ स्तव्यभव्यक्रमोज्वलायै नमः
ॐ ऋद्धिदायै नमः
ॐ बुद्धिदायै नमः
ॐ बुद्ध्यै नमः
ॐ धनधान्य विवर्थिन्यै नमः
ॐ यशोदायै नमः 50
ॐ सुयशःपूर्णायै नमः
ॐ यशोदानंदवर्थिन्यै नमः
ॐ धर्मज्ञायै नमः
ॐ धर्म विभवायै नमः
ॐ धर्मरूपतनूरुहायै नमः
ॐ विष्णुपादोद्भवीप्रख्यायै नमः
ॐ वैष्णव्यै नमः
ॐ विष्णु रूपिण्यै नमः
ॐ वसिष्ठ पूजितायै नमः
ॐ शिष्टायै नमः 60
ॐ शिष्टेष्टायै नमः
ॐ शिष्टकामधुहे नमः
ॐ दिलीपसेवितायै नमः
ॐ दिव्यायै नमः
ॐ खुरपावित विष्टपायै नमः
ॐ रत्नाकर समुद्भूतायै नमः
ॐ रत्नदायै नमः
ॐ शक्रपूजितायै नमः
ॐ पीयूष वर्षिण्यै नमः
ॐ पुण्यायै नमः 70
ॐ पुण्यापुण्यफलप्रदायै नमः
ॐ पयः प्रदायै नमः
ॐ घृतदायै नमः
ॐ घृत संभवायै नमः
ॐ कार्तवीर्यार्जुनमृतिहेतवे नमः
ॐ हेतुक सन्नुतायै नमः
ॐ जमदग्निकृताजस्र सेवायै नमः
ॐ संतुष्ट मानसायै नमः
ॐ पादरेणु पालित भूतलायै नमः
ॐ सवत्सायै नमः 80
ॐ वत्सकाराति पालितायै नमः
ॐ भक्तवत्सलायै नमः
ॐ वृषदायै नमः
ॐ कृषिदायै नमः
ॐ हेमश्रुंगाग्र तलशोभितायै नमः
ॐ भव्यायै नमः
ॐ भावितायै नमः
ॐ भवनाशिन्यै नमः
ॐ भक्तिमुक्ति प्रदायै नमः
ॐ कांतायै नमः 90
ॐ कांताजन शुभंकर्यै नमः
ॐ सुरूपायै नमः
ॐ बहु रूपायै नमः
ॐ अच्छायै नमः
ॐ कर्बुरायै नमः
ॐ कपिलायै नमः
ॐ अमलायै नमः
ॐ साधु शीलायै नमः
ॐ साधुबृंद निषेवितायै नमः
ॐ सर्ववेदमय्यै नमः 100
ॐ सर्वदेवरूपायै नमः
ॐ प्रभावत्यै नमः
ॐ वसूनां दुहित्रे नमः
ॐ रुद्रमात्रे नमः
ॐ आदित्य सहादर्यै नमः
ॐ तुष्ट्यै पुष्ट्यै नमः
ॐ स्वधायै नमः
ॐ मेधायै नमः
ॐ बुद्ध्यै नमः
ॐ सिद्ध्यै नमः 110
ॐ स्मृत्यै नमः
ॐ धृत्यै नमः
ॐ कांत्यै नमः
ॐ लक्ष्म्यै नमः
ॐ महा मायायै नमः
ॐ महादेवादिवंदितायै नमः
ॐ तीर्थस्वरूपायै नमः
ॐ देवेश्यै नमः
ॐ लोकानां मलहारिण्यै नमः
ॐ जाह्नव्यै नमः 120
ॐ यमुनायै नमः
ॐ गोदायै नमः
ॐ सूर्यपुत्र्यै नमः
ॐ सरस्वत्यै नमः
ॐ योगानंदायै नमः
ॐ योगसिद्धिप्रदायै नमः
ॐ योगिसेवितायै नमः
ॐ श्रीकर्यै नमः
ॐ श्रीमत्यै नमः
ॐ श्रीदायै नमः 130
ॐ श्रीमद्गोलोक वल्लभायै नमः
ॐ श्री गोमात्रे नमः 132

श्री गोमात्रे नमः नानाविध पुष्पाणि समर्पयामी
(तदनंतर धूप-दीप, नैवेद्यों को समर्पित करना है।)

धूप

॥श्लो॥ देवद्रुमरसोद्भूतो गोघृतेन समन्वितः।
प्रयच्छामि महाभागे! धूपो-यं प्रतिगृह्यताम्॥
श्री गोमात्रे नमः धूपं समर्पयामी।

दीप

(तीन बातियाँ रखें और दीपक जलाएँ। दो बातियों से दीप जलाना शास्त्र विरुद्ध है।)

॥श्लो॥ आनंदकृत् सर्वलोके देवानांच सदाप्रियः।
गौ स्त्वं पाहि जगन्मातः दीपो-यं प्रतिगृह्यताम्॥
श्री गोमात्रे नमः घृतवर्ति दीपं दर्शयामी।

नैवेद्य (घास खिलाओ)

॥श्लो॥ सुरभि स्त्वं जगन्मातः देवी! विष्णुपदेस्थिता।
सर्वदेव मये ग्रासं मयादत्त मिमं ग्रन॥
श्री गोमात्रे नमः ग्रास नैवेद्य समर्पयामी।
(तदुपरांत पुलगं खिलाओ।)

॥श्लो॥ कृशरान्न समायुक्तं गोघृतेन परिप्लुतम्।
नै वेद्यंच मया दत्तं सुरभिः प्रियता मिति॥
श्री गोमात्रे नमः कृशरान्नं समर्पयामी।

तांबूल (पान)

॥श्लो॥ पूगीफलसमायुक्तं नागवल्ली दलैर्युतम्।
सौरभेयी! नम स्तुभ्यं तांबूलं प्रतिगृह्यताम्॥
श्री गोमात्रे नमः तांबूलं(पान) समर्पयामी।

नीराजन

(आरती कर्पूर डालें और इनके साथ पाँच घी बातियाँ को उपयोग करना है।)

॥श्लो॥ नीराजनं गृहाणेदं पंचवर्ति समन्वितम्।
तेजोराशिमयं दत्तं गृहाण त्वं सुरेश्वरी॥
श्री गोमात्रे नमः कर्पूरनीराजनं समर्पयामी।
नीराजनानंतर शुद्धाचमनीयं समर्पयामी।

(ऐसा कहकर, उद्धरिणी पानी को गाय को दिखाकर, अर्घ्य पात्र में छोड़ना चाहिए।)

पुष्पांजलि

(हाथों भरपूर पुष्प लेकर-यहाँ निम्न सूचित श्लोक कहकर, गाय के चरणों पर समर्पण कर, नमस्कार करना चाहिए।)

॥श्लो॥ गावो ममाग्रत स्संतु, गावो मे संतु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये नित्यं गवां मध्ये वसा म्यहम्॥

॥श्लो॥ सर्वदेवमये! देवी! सर्वदेवै रलंकृते।
मात र्ममाभिलषितं सफलं कुरु नंदिनि॥

प्रदक्षिण नमस्कार (परिक्रमा नमस्कार)

(गाय को तीन बार परिक्रमा (बाएँ से दाएँ ओर) करके, साष्टांग नमस्कार करना है।)

॥श्लो॥ गां दृष्ट्वातु नमस्कृत्य कुर्या च्चैव प्रदक्षिणम्।
प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुंधरा।

॥श्लो॥ मातर स्सर्वभूतानां गाव स्सर्वसुखप्रदाः।
वृद्धि माकांक्षता नित्यं गावः कार्याः प्रदक्षिणाः॥

श्री गोमात्रे नमः प्रदक्षिण(परिक्रमा) नमस्कारान् समर्पयामी।

नमस्कार

॥श्लो॥ क्षीरोधार्णव संभूते! सुरा-सुर नमस्कृते।
मात र्ममाभिलषितं सफलं कुरु नंदिनि!

॥श्लो॥ देहस्था याच रुद्राणी शंकरस्य सदाप्रिया।
धेनुरूपेण सा देवी मम शांतिं प्रयच्छतु॥

श्री गोमात्रे नमः नमस्कारान् समर्पयामी।

(बाद में पुष्प, अक्षत हाथ में लेकर, तीन उद्धरिणी के पानी को उसमें डाल कर, यहाँ निम्न सूचित वाक्य को कह कर, टोकरी में छोड़ना चाहिए।)

"अनया ध्यानावाहनादि षोडशोपचार पूजया
माता सौरभेयी प्रीणातु।"

"सर्वं श्रीकृष्णार्पणमस्तु"

"लोका स्समस्ता स्सुखिनो भवंतु"

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः!

(तदनंतर गाय को चारा खाने के लिए छोड़ना चाहिए।)

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी

पेरियवर् पेशिलुम् पेदैयर् पेशिलुम्, तन् कुणंगट्कु
उरिय शोल्लेन्रु मुडैयव नेन्नेन्रु, उणर्विल् मिक्कोर्
तेरियुम् वण्कीर्ति यिरामानुजन् मरै तेर्न्दुलहिल्
पुरियु नल्ज्ञानम्, पोरुन्दादवरै प्पोरुम् कलिये ॥८७॥

प्राज्ञैर्महात्माभिः स्तुतोऽपि अनभिज्ञैरल्पैस्स्तुतोऽपि सन् तत्तद्वाग्भरसंस्तुतकल्याणगुण एवासौ गुरुवर इति महात्मभिः कीर्त्यमानेन भगवता यशस्विना रामानुजेन वेदतात्पर्यनिष्कर्षपूर्वकमिहोपदिष्टानर्थान् अनधिगच्छन्तो दुर्भगा एव कलिपुरुषाभिभवभाजनभूताः॥ (प्राज्ञानां मितज्ञानां च स्तुतेरेकरूपत्वकथनेन महार्णवान्तः को मज्ञतोरणुकुलाचलयोर्विशेष इति स्तोत्ररत्नसूक्तिः स्मारिता भवति। यथावसस्थितगुणकीर्तनस्य सर्वज्ञाना मप्यशक्यतया प्राज्ञानामल्पज्ञानां च स्तुतिस्समरूपैव हि भवति॥)

''ज्ञानी लोग स्तुति करें, अथवा अल्पज्ञ स्तुति करें'', गुरूजी के शुभगुण उनकी वाणी के अनुगुण ही होते हैं, यों कहते हुए महात्मा लोग जिनका यशोगान करते हैं, ऐसे श्री रामानुज स्वामीजी से वेदों का विवेचनपूर्वक इस धरातल पर उपदिष्ट श्रेष्ठ ज्ञान नहीं पानेवाले भाग्यहीन मानव कलिपुरुष से पीडित होते हैं। (विवरण-श्री रामानुज स्वामीजी का यशोगान करने के विषय में अज्ञप्राज्ञविभाग होता ही नहीं। दोनों की स्तुति एक समान ही प्रतीत होगी; क्योंकि उनकी महिमा सागर की भांति अथाह रहती है और कोई भी उसको पार नहीं कर सकता। फिर अज्ञकृत स्तुति की अपेक्षा विशेषज्ञ कृत स्तुति में कौनसी विशेषता रह सकेगी? कुछ नहीं। ऐसे महावैभववाले उन्होंने समस्त वेदों का ठीक विवेचन करके सबके योग्य श्रेष्ठ उपदेश दिया। परंतु कोई, कलिपुरुष के भक्त उस उपदेश से लाभ नहीं लेना चाहते। अहो उनकी भाग्यहीनता!)

क्रमशः

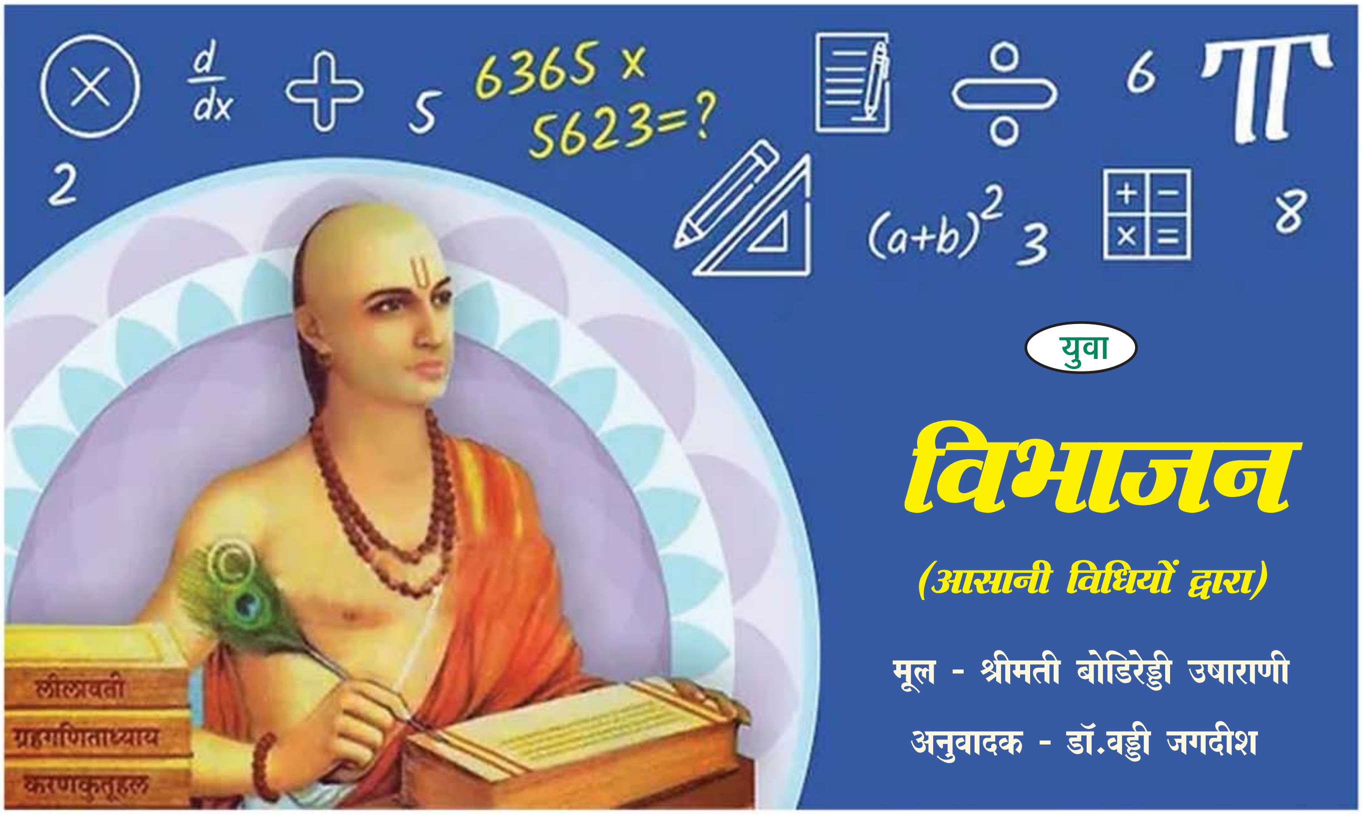

युवा

विभाजन

(आसानी विधियों द्वारा)

मूल - श्रीमती बोडिरेड्डी उषाराणी

अनुवादक - डॉ.वड्डी जगदीश

I. किसी एक संख्या को 5 से विभाजन करते समय आसानी विधि को अनुकरण करने का विधान :

विधि : किसी एक संख्या को 5 से विभाजन करने के लिए दी गई संख्या को दुगुना कर फिर दहिने ओर से एक डेसिमल स्थान को बहिने तरफ सरकाना

उदा : 127 को 5 से विभाजन करने के लिए : 127 को दुगुना करने से 254 बनता है। इस को 10 से विभाजन करने से 25.4 होता है।

II. किसी एक संख्या को 15 से विभाजन करने केलिए आसानी पद्धति को प्रयोग करना :

विधि : किसी एक संख्या को 15 से विभाजन करने के लिए संख्या को दुगुना कर 30 से विभाजन करना चाहिए।

उदा (1) : 105 को 15 से विभाजन करने के लिए : 105 को दुगुना करने से 210 होता है। इस को 30 से विभाजन करने पर 7 आता है।

उदा (2) : 75 को 15 से विभाजन करने के लिए : 75 को दुगुना करने से 150 बनता है। तब 35 से विभाजन करने पर 5 आता है।

III. किसी एक संख्या को 12, 14, 16, 18, 20, 22, 24 आदि सम संख्याओं से विभाजन करने के लिए आसानी पद्धतियाँ :

विधि : एक संख्या को 12, 14, 16, 18, 20, 22, 24 जैसे आदि सम संख्याओं से विभाजन करने के लिए दी गई संख्याओं का आधा करके क्रमशः 6, 7, 8, 9, 10, 11,12 से विभाजन करना है।

उदा (1) : 204 को 12 से विभाजन करने के लिए 204 को आंधा करने से 102 बनता है।

$$\frac{204}{12} = \frac{102}{6} = 17$$

उदा (2) : 392 को 14 से विभाजन करने के लिए :

392 की आधी संख्या -196

तब $\frac{392}{14} = \frac{196}{7}$ = 28 होता है।

ऐसे हीं 16, 18, 20 से भी विभाजन कर सकते हैं।

उदा (3) : 1176 को 24 से विभाजन करने के लिए :

इस में आधी संख्या : 588

$\therefore \quad \frac{1176}{24} = \frac{588}{12} = 49.$

इस तरह सम संख्या देने पर आसानी तरीका से विभाजन कर सकते हैं।

IV. कारण संख्याओं जैसे विभाजन करने की विधियाँ :

विधि : किसी एक संख्या को कारण संख्याओं से विभाजन करते समय पहले कारणांक को विभाजित कर उसकी पहली संख्या को किसी एक कारणांक से विभाजन करने से आने वाली संख्या को फिर 2वां कारणांक से विभाजन करना चाहिए।

उदा (1) : 1088 को 32 से विभाजन करने के लिए : 32 को कारणांक रूप में विभाजन करने पर 8, 4 आते हैं। पहले 8 से विभाजन करने पर 136 आता है। फिर 4 से विभाजन करने पर 34 आता है।

$\frac{1088}{8} = 136, \quad \frac{136}{4} = 34,$

$\therefore \frac{1088}{32} = 34.$

उदा (2) : 832 को 16 से विभाजन करने के लिए : 16 को कारणांक रूप में विभाजन करने पर क्रमशः 8, 2 आते हैं। पहले 8 से विभाजन करने पर 104 आता है। तुरंत 2 से विभाजन करने पर 52 आता है।

$\frac{832}{8} = 104, \quad \frac{104}{2} = 52,$

$\therefore \frac{832}{16} = 52.$

'सौ के आस-पास की संख्याएँ'

I. विधि (1) : सौ के आस-पास संख्याओं से विभाजन करते समय विभाजन का सैकड़ स्थान की विभक्त बोलते हैं। विभाजन से 100 को निकालने पर आनेवाली संख्या को दशम एवं प्रथम स्थानों को मिलाके से शेष मिलता है।

उदा (1) : 111 को 89 से विभाजन करने के लिए :

तब विभक्त = 1,

100 से 89 को निकालने पर 11 आता है।

इस संख्या को दशम एवं प्रथम स्थानों से जोड़ने पर शेष (फल) 11+11=22 होता है।

उदा (2) : 112 को 73 से विभाजन करने के लिए :

विभक्त = 1,

100 से 73 को निकालने पर 27 आता है।

शेष फल = 12+27=39.

उदा (3) : 198 को 88 से विभाजन करने के लिए :

विभक्त = 1,

100 से 88 को निकालने पर 12 आता है।

इस को 98 से जोड़ने पर शेष फल मिलता है।

शेष फल = 98+12

=110.

शेष फल का फिर शेष = 1,

शेष = 22,

इसलिए कुल विभक्त फल = 2

शेष = 22.

II. विधि (2) : दो अंकों की संख्या को 7 से विभाजन करने पर दशम स्थान की संख्या विभक्त (फल) होता है। दशम स्थान की संख्या को उसे गुणन कर प्रथम स्थान की संख्या से जोड़ने पर शेष मिलता है।

उदा (1) : 12 को 7 से विभाजन करने के लिए :

विभक्त फल = 1,

शेष = 1x3+2

= 3+2

= 5.

उदा (2) : 22 को 7 से विभाजन करने के लिए :

विभक्त = 2, शेष = 2x3+2

= 6+2= 8

शेष का फिर विभक्त = 1,

शेष = 1 होता है।

इसलिए कुल विभक्त = 3,

शेष = 1 होता है।

III. विधि (3) : 3 अंकों वाली संख्या को 7 से विभाजन करने पर पहले दो अंकों वाली संख्या को प्रथम संख्या को उसे गुणना करने पर आने वाली संख्या से समान होता है।

विभक्त का प्रथम स्थान की संख्या को 3 से गुणना कर प्रथम स्थान की संख्या से मिलाने पर शेष फल मिलता है।

उदा (1) : 101 को 7 से विभाजन करने के लिए :

विभक्त फल = 10+1x3

= 13

शेष = 3x3+1...

= 9+1

= 10.

शेष का फिर विभक्त = 1, शेष = 3

इसलिए कुल विभक्त = 14, शेष = 33.

इस प्रकार आसानी तरीकों से विभाजन कर सकते हैं।

श्री वेंकटेश्वर परब्रह्मणे नमः

हिन्दू होने के नाते गर्व कीजिए!

* ललाट पर अपने इच्छानुसार (चंदन, भस्म, नामम्, कुंकुम) तिलक का धारण करें।
* नहाने के बाद निम्न भगवन्नामों में से किसी एक का एक पर्याय में १०८ बार जप करें।

श्री वेंकटेशाय नमः।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो नारायणाय।

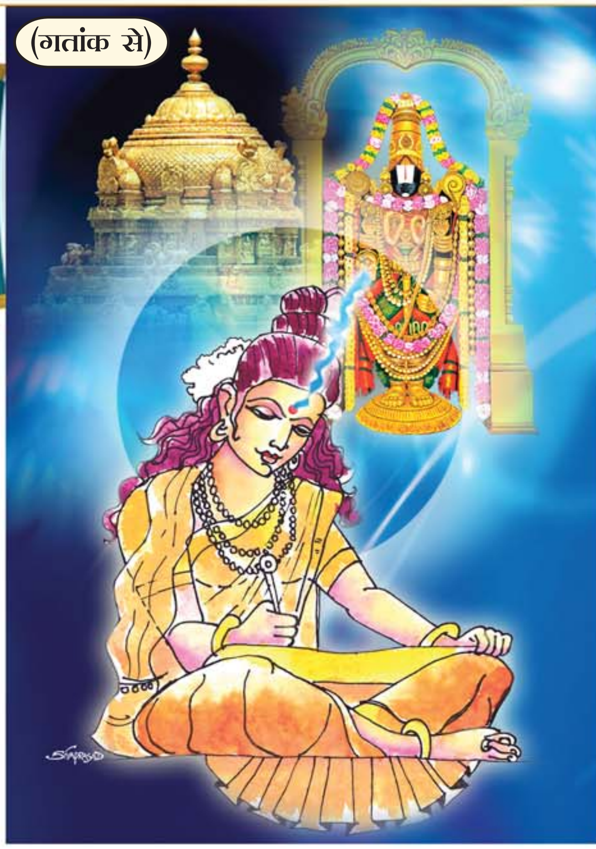

श्री वेंकटाचल की महिमा

(हिंदी गद्यानुवाद)

तृतीय आश्वास

तेलुगु मूल
मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा

हिंदी अनुवाद
आचार्य आई.एन.चंद्रशेखर रेड्डी

तामस शिष्य का स्वभाव :

ऐसे महान गुरु अपने को प्राप्त योग की शिक्षा सभी शिष्यों को नहीं देना चाहिए। शिष्य की परीक्षा करके शिक्षा देने योग्य पाने पर ही उसे शिक्षित करना चाहिए। शिक्षा को पाने में असमर्थ तामसी शिष्य को शिक्षित नहीं करना चाहिए। ऐसे शिष्य को शिक्षा देने पर भी उसे वह पसंद नहीं करेगा। क्यों कि ऐसा शिष्य वेश, भाषा पर गर्व ही करेगा। शिक्षा के मूल तत्व को पकड नहीं पायेगा। आरंभ में ही शिष्य के दुर्गुणों का पता लगाकर डांटते, पीटते उसे सुगुणों को सिखाना चाहिए। ऐसे करने के लिए शिष्य के तैयार नहीं होने पर भी गुरु को शांत रहना चाहिए। ऐसा न करने से शिष्य के दुर्गुणों की परीक्षा लेकर उसे सजा दिलाने के क्रम में उस के दुर्गुण गुरु के मानस में रहकर गुरु को गुस्सा करने के लिए विवश करेगा। गुस्सा किसी को भी ताप के उत्पन्न होने का कारण बनता है। इसलिए तामसी शिष्यों को स्वीकार नहीं करना चाहिए। स्वीकार करने से आतुरता बढेगी। शांति भंग हो जायेगी। दुर्गुणों को त्याग नहीं करनेवाला, अरिषड्वर्ग को संग्रहित करनेवाला बडा दुष्ट होगा। गुरु के उपदेश से उस में वैराग्य की भावना क्या उत्पन्न हो सकती है?

सच्छिश्य का स्वभाव :

और सच्छिश्य कौन है? प्रश्न करने पर साधन चतुष्टय संपन्न, कपटरहित, जार, चोर, क्रूर गुणों को त्याग करके, परम शांति चाहनेवाला सच्छिश्य है। ऐसा ही शिष्य मोक्ष पर आसक्त होकर, गुरु की सेवा करते हुए उस के अनुग्रह का पात्र होता है। ऐसा सच्चिश्य देहाभिमान को छोड कर प्रणवपूर्वक वेंकटेश्वर का नाम स्मरण करता है। फिर अपने निज बल से षुषुम्ना द्वार को तोड कर योग मार्ग से परमपद को प्राप्त करता है। ऐसे योगाभ्यास करने में असमर्थ होने पर भी अत्यंत गुरुभक्ति रखते हुए, इससे गुरु की कृपा से भक्ति, ज्ञान, वैराग्य का अभ्यास करते उपशांति को प्राप्त करके, ज्ञानी होने का गर्व न करके विनयशील होना चाहिए। क्यों कि ज्ञानाहंकार ही मनुष्य को दुष्ट बनाता है। इसलिए बुद्धिवान ज्ञानाहंकार को त्याग करके उपशांति को पाना अच्छा है। उपशांतिहीन

मनुष्य के जप-तप, योग-विधियाँ पृथ्वी पर कपट बन कर बुरी मानी जाती हैं। इसलिए हे कमलाक्षी! उपशांति ही परम धर्म है।

ऐसे ज्ञान, भक्ति, वैराग्य योगों के लिए सदा अनेक विघ्न पैदा होते रहते हैं। ऐसे विघ्नों से मुक्त होने का एक उपाय है। वह ऐसा है कि वेंकटाद्री पर सनकसनंदन तीर्थ अति गोप्य रूप में स्थित है। इस के बारे में नरों को मालूम नहीं है। उस के समीप पापविनाशन तीर्थ सिद्ध स्थल के रूप में स्थित है। मार्गशीर्ष, शुद्ध द्वादशी दिन को अरुणोदय के समय स्वामिपुष्करिणी में स्नान करना चाहिए। तदुपरांत त्रयोदशी के दिन से सनकसनंदनतीर्थ में डुबकी लगाते पुनः वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन करना चाहिए। दर्शन के साथ-साथ अष्टाक्षरी मंत्र का जप करना चाहिए। साथ ही योगाभ्यास करनेवालों को सारे विघ्न नष्ट हो जाते हैं। योग सिद्धियाँ भी प्राप्त होंगी। पापनाशन तीर्थ के समीप ही अतिगुप्त कायरसायन नामक पुण्य तीर्थ है। उस तीर्थ के जल को पीने से देह दिव्य देह बनती है। परीक्षा करने के लिए एक पीले पत्ते को उस में डालने से वह श्यामल वर्ण में बदल जायेगा। इसलिए उस तीर्थ के पान से देह सिद्धि प्राप्त होती है। उस रूप में स्वस्थ्य और बलवान को श्री वेंकटेश्वर की सेवा करने का पुरुषार्थ प्राप्त होता है। ऐसी सेवा न करने से वह स्वामी द्रोही बन जाता है। इसलिए सदा श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सेवा करते रहना उचित है। ऐसा वराह स्वामी ने भूदेवी से कहा और व्यास मुनि ने इस क्रम को मुझे बताकर तदुपदेश क्रम की आज्ञा दी है। ''उस वृत्तांत को मैं ने आप को सुनाया।'' सूत ने शौनकादि मुनियों से कहा। तब शौनकादि मुनियों ने सूत को देख कर इस रूप में कहा। ''हे सूत महानुभाव! परम शुद्ध योग के मर्म को सुंदर रूप में भूदेवी को श्वेत वराह स्वामी ने बताया। महा प्रीति से बादरायण उसे ग्रहण करके आप को बताने पर, उसे आप हमें अच्छी तरह सुनाया। महानंद हुआ!''

श्री वेंकटेश्वर अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र प्रभाव :

''हे महानुभाव! बहुत संतोष हुआ। वेदांत वेद्य श्री वेंकटेश्वर के अर्चना-वैभव को हमें अब बताइए।'' शौनक आदि मुनियों की इन बातों को सुन कर संतोष का अनुभव करते हुए सूत ने इस रूप में कहा। ''हे घनात्मा! आप के पूछने के अनुसार महान शेष से कपिल मुनि मोद से पूछने पर, संतोष के साथ शेष ने इस रूप में कहा।'' 'हे मुनिगण! मुख्य रूप से इसे सुनिए। गुरुतर, हरि प्रीतिकर, परम गोपनीय, परिताप हरन करनेवाला, रम्य अष्टोत्तर शतनाम काम्य फलों को प्रदान करनेवाला है। वह ऐसा है सुनिए!' स्वर्ण नदी में पैदा होनेवाले स्वर्ण कमलों को लाकर ब्रह्म ने वेंकटेश्वर के अष्टोत्तर शतनाम के रूप में दीपित नामावली के साथ पूजा करके आनंद प्राप्त किया। तद्वारा स्वामी से सर्वलोक पितामह ब्रह्म सकल काम्यार्थों को प्राप्त करके संतुष्ट हुए। ऐसे अष्टोत्तर शतनामों का पठन करने के पहले प्रणव पूर्वक श्री वेंकटेश्वर के अष्टाक्षरी महामंत्र का न्यासयुक्त जप करना चाहिए। उसे हरि को समर्पित करके तदुपरांत ध्यान, वाहनार्घ्य, पाद्यचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गंधाक्षतों को समर्पित करके वेंकटेश अष्टाक्षरी का जप करके, 'श्री वेंकटेशाय नमः' कहते अष्टोत्तर शत नामों का उच्चारण करते हुए पाद से शीर्ष तक सर्वांग समर्पण करना चाहिए। फिर धूप, दीप, नैवेद्य, तांबूल, सुवर्ण पुष्प, कपूर नीराजन, मंत्र पुष्प, परिक्रमा, नमस्कार समर्पित करते हुए एकाग्र ध्यान निष्ठा भक्त पर श्री वेंकटेश्वर प्रसन्न हो जाते हैं। इहलोक और परलोक के फल प्रदान करते हैं। यह अष्टोत्तर शतनामावली अत्यंत गोपनीय है। श्रद्धा-भक्ति के साथ गुरु पर विश्वास रखते हुए उस गुरु मुख से जान कर पठन करने पर इससे अत्यंत सफलता प्राप्त होती है। 'शेष के द्वारा प्राप्त इसे आप को बताया।' ऐसा सूत ने शौनकादि मुनियों से कहा और आगे इस रूप में कहा। कपिल मुनि के पूछने पर स्वीकार करके

शेष ने निष्कपट होकर उस क्रम को कर्दम पुत्र को बताया। मुझे उस कपिल मुनि ने संक्षेप में बताया। जो कुछ मैं जानता हूँ। उसे मैं ने अब आप लोगों को बताया। हे मुनीश्वर! इस अष्टोत्तर शतनाम का सद्भक्ति से पारायण करनेवाले सात्विकों को ये शेषगिरिधीश! अनन्य पद प्रदान करते हैं।

नैमिशारण्य मुनियों का वेंकटाद्री पधारना :

इसे सुनकर शौनकादि मुनियों ने इसे अत्यद्भुत कहा। वेंकटेश्वर के दर्शन के निर्णय करके अखंड भक्ति से कुछ कह पाने की स्थिति में उन को देखकर सूत ने इस रूप में कहा। ‘‘हे मुनिवर! आप को बहुत सुंदर ढंग से अब मैं क्या बता सकता हूँ।’’ इस रूप में कहने पर सूत को देखकर उन दिव्य मुनियों ने इस रूप में कहा। ‘‘वेंकटाद्री पहाड को देखने की अटल इच्छा मन में हो रही है। श्री वेंकटाद्री महिमा को सुन कर हम तृप्त हो गए हैं। हमारे श्रवण अंग इससे धन्य हो गए। नेत्रों में प्रेम बढ कर दर्शन करने की इच्छा पैदा हो गयी है। वेंकटगिरि के दर्शन करके आयेंगे। हे सूत! करुणोपेत!’’ ऐसा मुनियों के कहने से सूत ने मुनियों के उत्साह को देखकर इस रूप में कहा। ‘‘हे तापसी! अब आप यहाँ विलंब नहीं करते हुए वेंकटाद्री के लिए निकल जाइए। उस वेंकटगिरि शैल को आश्चर्य से देखकर महोत्साह से वहाँ के श्री वेंकटेश्वर के दर्शन कीजिए।’’ ऐसा कहते सूत ने वेंकटाद्री का वैभव, श्रीनिवास की महानता, स्वामित्व को प्रदान करनेवाले तीर्थों की महिमा के बारे में बताया। इसके अतिरिक्त भूवराह स्वामी को प्राप्त नारायण चिह्न और उनके अद्वितीय प्रभाव के बारे में बताने पर अपने सारे संशयों को निवृत्त करके संतोष के साथ शौनकादि मुनिगण वेंकटगिरि यात्रा के लिए निकल पडे।

गौतम, जाबाली, कश्यप, अंगीरस, श्रीवत्स, कौत्स, मैत्रेय, पुलह, कण्व, गार्गेय, मृकंदु, भरद्वाज, कौशिक, देवल, क्रतु, पुलस्त्य आदि सारे प्रमुख मुनिगण नैमिशारण्य को छोड कर तब गंगा के तट पर पहुँच कर स्नान करके, वहाँ से गोदावरी, कृष्णा नदियों में स्नान करके, मार्गमध्य में स्थित पुण्य तीर्थों में डुबकी लगाते, सद्भक्ति से श्री वेंकटेश्वर के दर्शन की अभिलाषा से सारे मुनिगण चले आये।

श्री वेंकटगिरि के दक्षिण में स्थित कपिलतीर्थ पहुँच कर, ब्रह्म तत्व के प्रभाव से प्रकाशित पुण्य तीर्थों में स्नान करके, वेंकटाचल पर्वत पर चढना उन्होंने शुरू किया। मार्ग में मेरु गिरि समान सुवर्ण प्रभाओं के समान वाले श्रृंग समूहों के दर्शन किए। नवरत्न कांति से सुशोभित पर्वत सानु देशों को, फल-पुष्पों से भरे पुण्य वृक्ष समूहों को, गंगा समान अनेक पुण्य तीर्थों को, शुक, पिक, कलकंठ, मराल, मयूर आदि प्रमुख विहंगों के समूहों को, सिंह, व्याघ्र,

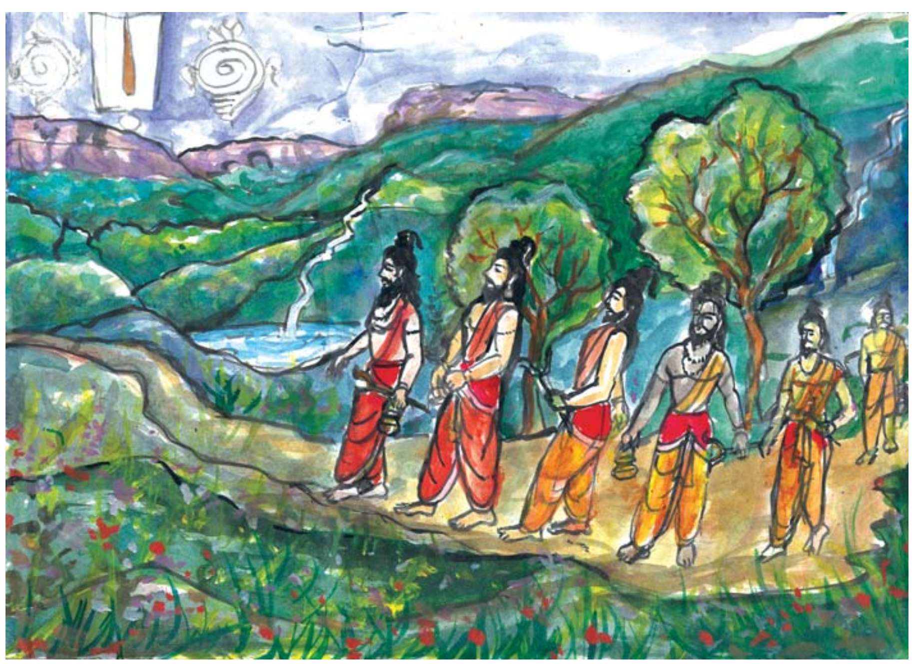

वराह आदि प्रमुख वन्य मृगों को, गरुड, गंधर्व, यक्ष, किन्नेर जाति के समूहों को देखते, बीच बीच में दिखाई पडनेवाले पुण्य तीर्थों में स्नान करते हुए, साम गान करते चल रहे थे। जल से भरे, कनक, कमल, कल्हार से परिवेष्टित स्वामी की पुष्करिणी का उन्होंने दर्शन किया। पुष्करिणी में स्नान करके वराह स्वामी के दर्शन किए। भक्ति पूर्वक उन की पूजा की। तदुपरांत श्रीनिवास की सन्निधि में गए। वहाँ दिव्य विमान की परिक्रमा की। सभा मंटप में खडे होकर श्री वेंकटेश्वर के दर्शन किए। स्वामी को अंजली समर्पित करते पुलकित हुए। नेत्रों से आनंद भाष्पों के निकलने से गद्गद कंठों से वेद-वेदांत, शास्त्र प्रकारों से स्वामी की विनति की। तदूपरांत श्रीनिवास के दर्शन करके आनंदपरवश हुए। जटा-जुटाएँ हिलाते आनंदपरवश में नाचते गाते असीम आनंद को प्राप्त किया। इंदिरेश्वर के पास वे उडते उछलते गए। भगवदावेश में लीन होकर आनंदात्मा बन कर अच्छी तरह नाचते गाते सकल वेदों को उच्च स्वर में उन्होंने पठन किया।

वेदों का पठन करते करते निष्ठागरीष्ठ वे सारे मुनिगण खडे होकर अनुपम सौंदर्य वाले श्री वेंकटेश्वर के नेत्रपर्व रूप में दर्शन करके मन को उस स्वामी पर केंद्रित करके भक्ति में डूब कर तन्मय हो उठे। उन्होंने अष्टोत्तर शत नामों का अत्यंत इच्छा के साथ पठन करते सुवर्ण पुष्पों से सृष्टि, स्थिति, लयकार श्री वेंकटेश्वर की पूजा अपने मन भरने तक की है।

तब कोटि प्रकाशवान, आजानुबाहू, अच्युत, परिपूर्ण चंद्र बिंब समान चेहरे वाले, मंदस्मित मुद्रा के माधव, सललित मकर कुंडल कर्णों से शोभित, मणि किरीट मस्तकवाले, श्रीवत्सलांचन दिव्य वक्षवाले, पीतंबर धारी, शंख, चक्र, कमललोचन, परमात्मा, लोक कर्ता नारायण ने अत्यंत दया के साथ मुनियों की तरफ देखकर संतोष के साथ कहा।

क्रमशः

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक-लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले कृपया लेखक-लेखिकाओं निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

1. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।
2. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।
3. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।
4. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशित नहीं है।'
5. रचनाओं को प्रकाशन करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक का कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।
6. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक पास बुक का प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ संलग्न करके भेजना अनिवार्य है।
7. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं को निम्न पते पर भेज दें। पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति – 517 507. चित्तूर जिला।

सर्व विद्या प्रदाता! नमो नमः!!

- श्रीमती एन.मनोरमा

भगवान श्री महाविष्णु के अनेक अवतारों में श्री हयग्रीव अवतार का एक विशिष्ठ स्थान है। 'हय=घोडा'; 'ग्रीव=सिर' जैसा की नाम से सिर घोडे का था और शरीर मनुष्य का। वे बुद्धि के देवता माने जाते हैं। उन्होंने हयग्रीव नामक दानव का वध करने केलिए इस रूप का धारण किया था। राक्षस हयग्रीव ने ब्रह्माजी से वेदों को छीन लिया और देवताओं और मानवों को सताने लगा। यज्ञादि कर्म बंद हो गए और सभी लोग पाहिमाम... रक्षमाम... शरण मांगने लगे। इस समय ब्रह्माजी सभी देवताओं के साथ श्री महाविष्णु के पास गए। लेकिन भगवान विष्णु ने योगनिद्रा में था। उनके धनुष की प्रत्यंचा चढ़ी हुई थी। ब्रह्माजी ने उनको जगाने के लिए वम्री नामक एक कीड़ा उत्पन्न किया। जिसने वह प्रत्यंचा काट दी। इससे भयंकर टंकार हुआ। और भगवान विष्णु का मस्तक कटकर अदृश्य हो गया। यह देखकर सभी देवता दुःखी हो गए और उन्होंने इस संकट के समय में माता भगवती महामाया की स्तुति की। ब्रह्माजी एक घोडे का मस्तक काटकर भगवान के धड से जोड दें। इससे भगवान का हयग्रीवावतार होगा। वे उसी रूप में दुष्ट राक्षस हयग्रीव का वध करेंगे। ऐसा कहकर भगवती अंतर्ध्यान हो गई।

भगवती के कथनानुसार उसी क्षण ब्रह्माजी ने एक घोडे का मस्तक उतारकर भगवान के धड़ से जोड़ दिया। भगवती की माया से उसी क्षण भगवान विष्णु का हयग्रीवावतार हो गया। फिर भगवान विष्णु अपने इसी अवतार में हयग्रीव नामक दैत्य से युद्ध करने पहुँच गए। अंत में भगवान के हाथों में हयग्रीव राक्षस की मृत्यु हुई। हयग्रीव को मारकर भगवान ने वेदों को ब्रह्माजी को पुनः समर्पित कर दिया। देवताओं और योगि-मुनियों को संकट से मुक्ति मिली।

वेदों को रक्षण कर, समस्त मानवाली को वेद ज्ञान को प्रसादित भगवान 'वाक्' के लिए अधिपति है। सभी प्रकार के शास्त्र विद्याओं, मंत्र-विद्याओं के लिए भी अधिदेवता है। 'श्री ललिता सहस्र नाम स्तोत्र' का प्रसादित देवता मूर्ति भी श्री हयग्रीव भगवान ही है।

इस अवतार मूर्ति को निर्दिष्ट रूप से स्तुति-पूजा आराधना करे तो अज्ञानांधकार दूर होकर ज्ञान, प्रज्ञा, वाक् सिद्धि प्राप्त होती है। ज्ञानानंदमय रूप में, स्फटिक के आकृति वाले, सर्वविद्याओं का आधार भूत माने हयग्रीव भगवद् आराधना से मानव के जीवन संपूर्ण ज्ञान से सफलीकृत होते है।

ज्ञानानंदमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम्।
आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे।।

मिथ की महिला चरित

विनता

- डॉ.के.एम.भवानी

भगवान की सृष्टि में हर प्राणी वह सुर-असुर, मानव या कोई अल्प जीवी भी क्यों न हो, सभी को अपने किए हुए काम का फल अवश्य भोगना पड़ता है इसीलिए सभी को हर पल, हर कदम, हर काम धर्म के आधार पर ही करने की कोशिश करनी चाहिए। दूसरों को क्षति पहुँचने का कोई भी काम नहीं करना है। हमेशा यह याद रखना चाहिए कि कभी भी काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या जैसे लक्षणों को वश में नहीं रखकर, उनके वशीभूत होकर काम करने पर उसका फल बुरा ही होता है। ईर्ष्या से गलती करने के कारण विनता को अपनी जिंदगी में पाँच सौ साल दासता में बिताना पड़ा। कृतयुग की यह कहानी महाभारत के आदिपर्व में वर्णित है।

विनता श्री महाविष्णु का वाहन गरुड़ की माता है। कश्यप प्रजापति की पत्नी है। दक्ष प्रजापति की पुत्री है। कद्दवा और विनता बहनें ही नहीं, सौत भी हैं। दोनों हजारों साल बहुत श्रद्धा और लगन से पति की सेवा करती हैं। पति कश्यप उनकी सेवा से खुश होकर वर माँगने को कहने पर दोनों संतान के लिए पति से प्रार्थना करती हैं तो कश्यप मान लेता है। कद्दवा अत्यंत शक्तिशाली दस हजार संतान माँगती है तो विनता उन दस हजार से भी अति बलवान दो पुत्रों को माँगते है। पति कश्यप उनकी चाह पूरा होने का आशीष देता है।

कुछ समय के बाद दोनों बहनें गर्भवती बन जाती हैं। दोनों के गर्भ से अंडे निकलती हैं तो कश्यप उन्हें सुरक्षित रखने को कहता है तो वे उन्हें सुरक्षित रखती हैं। समय के बीतते-बीतते कद्दवा के सारे अंडों से जो बच्चे जन्म लेते हैं वे ही नाग हैं। सर्प जाति है। बहन को बच्चे पैदा हुए। यह ईर्ष्या से विनता उस समय खुद पर संयम खो लेती है और अपने एक अंडे को फोड़ देती है तो उससे असंपूर्ण अंगों वाला (जांघों तक ही तैयार हुआ) बच्चा पैदा होता है और वह गुस्से से माता विनता को शाप देता है कि जिस बहन पर ईर्ष्या से बच्चे को असंपूर्ण अंगों से पैदा किया, उसी बहन कद्दवा की दासी बनकर पाँच सौ साल जीना है। माँ को शाप देने के बाद वह बच्चा सूर्य का रथ सारथी बनने के लिए सूर्य मंडल में चला जाता है। वहीं अनूर है। जाने से पहले वह माता से कहता है कि दूसरे अंडे को खुद फटने तक इंतजार करना है। कोई गलती नहीं होने देना है। उससे जो बच्चा पैदा होता है, वहीं माता की दासता को भी दूर करेगा।

एक दिन विनता और कद्दवा क्षीरसागर के किनारे विचरण करती रहती हैं। तब वे दोनों उच्चैश्रव नामक एक सफेद रंग के घोड़े को देखती हैं। बातों-बातों में कद्दवा कहती है कि- ''बहन! देखो! वह घोड़ा सफेद रंग में बहुत सुंदर दिख रहा है। लेकिन चाँद में दाग की तरह उसकी पूँछ काला है।'' तो विनता हँसती हुई कहती है कि- ''यह क्या बहन? तुम सोती हुई आँखों से देख रही हो क्या? नहीं तो दूध की ऊफान जैसे सफेद घोड़े में तुम्हें काला रंग कैसे दिख रहा है?'' यह सुनकर कद्दवा क्रोधित होकर कहती है कि- ''नहीं, उसकी पूँछ निश्चित रूप से काले रंग में ही है। ऐसा हो, तो तुम्हें मेरी दासी बनकर जीना है। ऐसा न रहकर उसकी पूँछ भी सफेद है तो मैं तुम्हारी दासी बनूँगी। क्या यह शर्त तुम्हें मंजूर है?'' विनता बहन की शर्त को मान लेती है। दोनों घोड़े के नजदीक जाकर देखना चाहती हैं लेकिन कद्दवा कहती है कि- ''बहन अब पति के शाम की पूजा का समय होने के कारण हमें जल्दी आश्रम को वापस जाना पड़ेगा। हम कल सुबह आकर देखेंगी।'' विनता इस बात को मान लेती है और दोनों बहनें आश्रम वापस चली जाती हैं।

शर्त के अनुसार हारने से दासी बनने के डर से उस रात को कद्दवा अपने बच्चों को (नागों) बुलाकर घोड़े की पूँछ को लपेट कर रहने को कहती है, ताकि घोड़े की पूँछ काला दिख पड़े। लेकिन वे नाग माता समान मौसी को धोखा देना धर्म विरुद्ध जानकर ऐसा करने को इनकार करते हैं और माँ का शाप पाते हैं। लेकिन कर्कोटक नामक नाग माँ के शाप से डर कर अपनी जान बचाने के लिए घोड़े की पूँछ को लपेट कर रह जाता है तो दूर से देखी विनता और कद्दवा को घोड़े की पूँछ काला दिखती है। शर्त के अनुसार विनता बहन की दासी बन जाती है। बहन जो भी काम बोलती है, वह सब करती हुई दासी की जिंदगी जीने लगती है।

समय के बीतते-बीतते विनता का दूसरा अंडा फटकर उसमें से अत्यंत शक्तिशाली बच्चा पैदा होता है, वहीं पक्षीराज गरुड़ है, जो माता विनता के नाम से वैनतेय कहलाया गया। अत्यंत शक्तिशाली होने पर भी दासी पुत्र होने के कारण उसे भी दास बनकर जीना पड़ता है। यह उसे बहुत दुखित करता है। एक दिन गरुड़ सौतेली माता अपनी माता विनता को बहुत हीनता से देखना सह नहीं पाता है और माता के पास जाकर पूछता है कि उन्हें इस तरह की नीच जिंदगी क्यों जीना पड़ रहा है? तब विनता बताती है कि- ''पुत्र! मुझे अपनी बहन कद्दवा से शर्त हारने के कारण और तुम्हारा भाई, मेरा अपना ही पुत्र अनूर के शाप के कारण दासी बनना पड़ा। लेकिन अनूर ने यह भी कहा है कि तुम्हारे कारण मेरी दासता दूर होगी। उनकी बातों को याद करते हुए मैं अपना दुःख भूल कर जी रही हूँ। पुत्र! तुम्हें मालूम है कि अगर पुत्र शक्तिशाली होते हैं तो माता-पिता के कष्ट रुई की तरह हवा में उड़ जाते हैं इसलिए तुम ही कोई उपाय सोचकर मुझे इस दासता से मुक्त करो।'' माता की बातों को सुन कर गरुड़ तुरंत अपने सौतेले भाई नागों के पास जाकर पूछता है कि- अपनी माता को दासता के बंधन से मुक्त करने के लिए उसे क्या करना चाहिए? तो नाग गरुड़ से उन्हें स्वर्ग से अमृत लाकर देने को कहते हैं।

विनती की धर्म निरती :

गरुड़ माता विनता के पास जाकर कहता है कि उसकी दासता को मिटाने के लिए वह स्वर्ग से अमृत लाने जा रहा है तो विनता खुशी से विजई होने का आशीष देकर भेजती है। स्वर्ग जाने के पहले गरुड़ माता से पूछता है कि उसे बहुत भूख लग रहा है इसलिए उसे कुछ खाने को चाहिए। तब विनता कहती है कि- ''हे पुत्र! यहाँ सागर में बोया नामक निषाद जाति के लोग हैं। वे लोगों को बहुत सता रहे हैं।''

इसलिए ऐसे लोगों को खाना धर्म विरुद्ध नहीं है। तुम उन लोगों को खाकर अपना भूख मिटाओ। लेकिन खाते समय एक बात जरूर ध्यान में रखना जरूरी है कि उनमें एक भी ब्राह्मण न हो, क्योंकि ब्राह्मण हत्या महापाप है। निगलते ही जो गले से नीचे न जाकर, गले में ही अटक कर आग की तरह जलाता रहता है, वहीं ब्राह्मण है। इससे धर्म के प्रति विनता की श्रद्धा के साथ-साथ, एक आदर्श माता की झलक भी देखने को मिलती है। माता की अनुमति और आशीष लेकर गरुड़ स्वर्ग जाकर सुरों को हराकर, देवराज इंद्र से अमृत को लेता है और उसे नागों को देता है और उनसे कहता है कि मैं अब आपको आपकी इच्छानुसार अमृत भांड लाकर देने के कारण अब से मेरी माता विनता दासता से मुक्त ही गयी। ऐसा कहकर गरुड़ अपनी माता को अपने पीठ पर बिठाकर चला जाता है। इस प्रकार दासता से मुक्त होकर विनता की जिंदगी फिर से खुशियों से भर जाती है।

प्रत्यक्ष भगवान, समस्त सृष्टि के आरोग्य प्रदाता, एक पल भी कहीं न रुक कर, सदा गमन करते चलने वाला सूर्य भगवान के ताप को सहते हुए उसके रथ को चलानेवाला योग्य सारथी एक पुत्र, समस्त सृष्टि के पालक श्री महाविष्णु का वाहन एक पुत्र - ऐसे दो पुत्रों को पाया विनता का जन्म धन्य है।

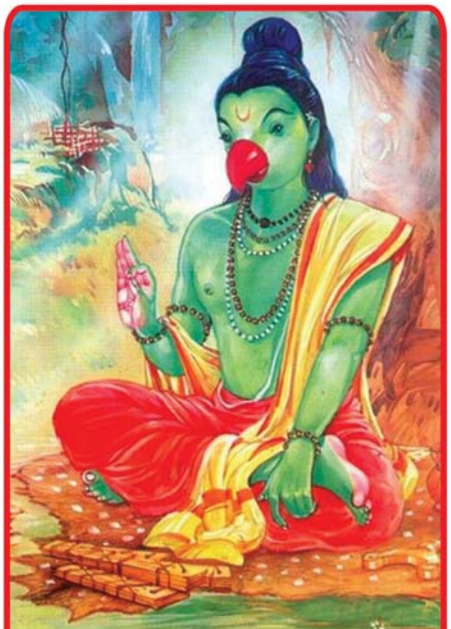

ऋषि-मुनि

शुकदेव

- डॉ.जी.सुजाता

शुकदेवजी महाभारत काल के एक महान ऋषि थे। वह ऋषि व्यास के पुत्र और भागवत पुराण के मुख्य कथावाचक थे। शुकदेवजी को एक संन्यासी के रूप में दर्शाया गया है, जिन्होंने मोक्ष की खोज में दुनिया को त्याग दिया था और मोक्ष प्राप्त किया। हिंदू महाकाव्य महाभारत के अनुसार शुकदेवजी अपने पिता की तरह ही तपस्वी शक्ति और वेदों के साथ पैदा हुए थे। ये बहुत कम उम्र में ही ज्ञान प्राप्ति के लिए वन में चले गए थे और ब्रह्मलीन हो गये थे। इनके माता का नाम वटिका था।

शुकदेव जी का जीवन परिचय

पौराणिक कथाओं के अनुसार, शुकदेव के जन्म के बारे में कई कथाएँ मिलती हैं। एक कथा के अनुसार, शुकदेव द्वापरयुग में भगवान श्रीकृष्ण व राधाजी के अवतार के समय राधा के साथ खेलने वाले शुक (तोता) थे। कहीं इन्हें भगवान शिव द्वारा व्यास जी के तप का वरदान बताया जाता है।

द्वापरयुग के अंत में महाभारत काल में महर्षि कृष्ण वेदव्यास के इस अयोनिज पुत्र को शुक के माध्यम से उत्पन्न होने के कारण शुकदेव कहा गया। ऐसी मान्यता है कि बैशाक कृष्ण अमावास्या के दिन इनका अवतरण इस धरा पर हुआ, इसलिए बैशाक कृष्ण अमावास्या को शुकदेव मुनि जयंती मनाने का प्रचलन भारत में प्राचीन काल से है। कथा के अनुसार, भगवान शिव माता पार्वती को अमर कथा सुना रहे थे। इस बीच पार्वती जी को कथा सुनते-सुनते नींद आ गई और उनकी जगह पर वहाँ बैठे एक शुक ने हुंकार भरना शुरू कर दिया। जब भगवान शिव को यह ज्ञात हुआ कि अमर कथा पार्वती जी नहीं बल्कि एक शुक सुन रहा है तो उन्होंने शुक को मारने के लिए अपना त्रिशूल छोड़ दिया।

शुक भगवान शिव से जान बचाने के लिए तीनों लोकों में भागता रहा, भागते-भागते वह व्यास जी के आश्रम आ पहुँचा और सूक्ष्म रूप धारण करके व्यास जी की पत्नी के मुख के द्वारा उनके गर्भ में जाकर छुप गया। कहते हैं कि भगवान शिव के भय से शुक 12 वर्ष तक गर्भ से बाहर नहीं निकला। गर्भ में ही इन्हें वेद, उपनिषद, दर्शन और पुराण आदि का सम्यक ज्ञान हो गया था। भगवान श्रीकृष्ण ने जब स्वयं आकर शुक को आश्वासन दिया कि बाहर निकलने पर उसके ऊपर माया का प्रभाव नहीं पड़ेगी, तभी वह माता वटिका के गर्भ से बाहर निकले और व्यास जी के पुत्र कहलाए। गर्भ से बाहर आते ही वह बारह वर्ष के किशोर बालक में परिवर्तित हो गए। सांसारिक मोह-माया का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उसने जन्म लेते ही तपस्या करने के लिए वन की और प्रस्थान किया।

शुकदेव जी से जुड़े रहस्य

हालांकि, व्यास जी की इच्छा थी कि शुकदेव श्रीमद्भागवत का अध्ययन करें। शुकदेव के वन में जाने के बाद व्यास जी ने भागवत का एक श्लोक बनाकर अपने शिष्यों को रटा दिया। शिष्य रोजाना उस श्लोक को गाते हुए वन में लकड़ियाँ लेने जाते थे। एक दिन शुकदेव ने शिष्यों के मुख से वह श्लोक सुन लिया, जिसके बाद वे श्रीकृष्ण लीला

के आकर्षण से बंधकर दोबारा अपने पिता श्री व्यास जी के पास लौट आए और श्रीमद्भागवत महापुराण के सभी श्लोकों का विधिवत अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त शुकदेव ने अपने पिता वेदव्यास जी से महाभारत भी पढ़ा था, जिसे इन्होंने बाद में सभी देवताओं को सुनाया था।

शुकदेव जी का विवाह

शुकदेव जी की आयु विवाह योग्य थी परंतु वह विवाह के बंधन में नहीं बंधना चाहते थे। उनके पिता ने उन्हें विवाह के लिए सहमत कराने के कई प्रयास किए परंतु वह ब्रह्मचर्य को गृहस्थ आश्रम से श्रेष्ठ समझते थे। सांसारिक बंधन एवं जीवों के जन्म-मरण से उनका मन व्यथित रहने लगा। सांसारिक बातों से वे उदासीन रहने लगे। अपनी अप्रतिम प्रतिभा के कारण प्रारंभ से ही ये देवताओं, ऋषियों एवं मानव मात्र के श्रद्धापत्र हो गये। लेकिन इनका गृहस्थाश्रम के प्रति विमोह देखकर व्यास चिंतित होने लगे, तथा विवाह बंधन में आबद्ध करने हेतु व्यास इन्हें समझाने एवं प्रेरित करने लगे। परन्तु शास्त्रोक्त विभिन्न उदाहरण देकर भी व्यास शुकदेव को गृहस्थाश्रम के लिए तैयार नहीं कर सके, तो उन्होंने शुकदेव को अपने यजमान मिथिलापुरी नरेश राजा जनक के पास धर्म और मोक्ष का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने हेतु भेजा। राजा जनक गृहस्थ होते हुए भी प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग के पूर्ण ज्ञाता और मुमुक्षु थे। वे शास्त्र मर्यादानुसार रहकर गृहस्थी ही नहीं अपितु सुचारू रूप से राज्य संचालन भी किया करते थे। वे अपने को राजा नहीं वरन प्रजा का प्रतिनिधि मानते थे। उनमें न राजमद था, न ही राज के प्रति लिप्सा। वे देह में रहकर भी विदेह कहलाते थे। राजा जनक ने शुकदेव की अनेकानेक विधियों से परीक्षा ली। शुकदेव मिथिला पहुँचे तो शानदार अट्टालिकाएँ, भव्य राजमहल, आभूषणों से सज्जित महिलाएँ व हरे-हरे उपवनों से सज्जित मिथिला का वैभव देखकर भी वे इनके प्रति आकर्षित नहीं हुए। महल के द्वार पर द्वारपालों ने उन्हें कड़ी धूप में देर तक खड़ा रखा किंतु वे जरा भी रुष्ट नहीं हुए, न उन्हें कष्ट हुआ। महल के भीतर प्रवेश मिला तो उन्हें एक उपवन में ले जाया गया। वहाँ मनोहारी नृत्य चल रहा था, किंतु शुकदेव निरासक्त बैठे रहे। फिर छप्पन प्रकार के व्यंजनों का भोजन कराया गया किंतु उन्होंने कोई प्रशंसा नहीं की। रात्रि में सोने के लिए उन्हें आरामदायक पलंग दिया गया, किंतु वे तपस्थ भाव से सो गए। ब्रह्म मुहूर्त में उठकर ध्यान करने लगे। महल के वैभव में शुकदेव जल में कमलवत रहे। अगले दिन उन्हें राजा जनक से मिलवाया गया। महाराज जनक के प्रवचन और उदाहरणों से उन्हें गृहस्थ आश्रम की श्रेष्ठता का आभास हुआ। राजा ने उनकी गृहस्थाश्रम की शंकाओं का समाधान किया तथा यह भी बताया कि सभी आश्रमों में गृहस्थाश्रम ही सबसे बड़ा आश्रम है। राजा के उपदेशों से शुकदेव मुनि की शंकाओं का समाधान हो गया, और वे अपने पिता के आश्रम में आ गये।

हरिवंश पुराण में शुकदेव के वंश विस्तार के सम्बन्ध में अंकित वर्णनानुसार शुकदेव का विवाह पच्चीस वर्ष की आयु में स्वर्ग में वभ्राज नाम के सुवर लोक में रहने वाले पितरों के मुखिया वर्हिषद जी की पुत्री पीवरी से हुआ था। कूर्म पुराण के अनुसार, शुकदेव मुनि के 5 पुत्र व एक पुत्री थी। हालांकि, कुछ कथाओं के अनुसार, शुकदेव जी के 12 महान तेजस्वी पुत्र व एक पुत्री थी।

राजा परीक्षित और शुकदेव जी की कथा :

कहते हैं राजा परीक्षित को एक ऋषि पुत्र के द्वारा सात दिनों के बाद मृत्यु का श्राप मिला था, श्राप से भयभीत होकर राजा परीक्षित ने अपने जीवन के शेष सात दिन को ज्ञान प्राप्ति और भगवत्भक्ति में व्यतीत करने के संकल्प कर लिया। शुकदेव ने राजा को भागवत की कथा सुनाने लगे। जब परीक्षित जी को भागवत कथा

सुनते-सुनते छे दिन बीत गए तब शुकदेव जी ने देखा कि परीक्षित के मन में अभी भी मृत्यु का भय हैं फिर उनकी इस दशा को देखते हुए शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को एक कथा सुनाई, कथा से अनुसार एक राजा एक बार जंगल में शिकार करने गए और जंगल में शिकार करते वक्त राजा अपना रास्ता भटक गया। इधर उधर भटकने के बाद उसे एक छोटी सी झोंपड़ी नजर आयी। जब राजा उसके अंदर गया तो उसने देखा वहाँ पर एक बहेलिया रहता है जो कि लम्बे समय से बीमार चल रहा था। जब राजा झोंपड़ी में गया तो उसने देखा कि उस बीमार बहेलिया ने उसी झोंपड़ी में एक तरफ शौच करने का स्थान बना रखा था तो खाने पीने के लिए जानवरों का मांस छत से टांग रखा था। उस छोटी सी झोंपड़ी में ये सब चीजों की वजह से वह झोंपड़ी दुर्गन्ध से भही हुई थी। लेकिन राजा के पास कोई दूसरा रास्ता न होने कि वजह से राजा ने उस बहेलिया से उस झोंपड़ी में रुकने के लिए निवेदन किया।

इस बात पर बहेलिया ने बोला कि मैं हमेशा से भटके हुए राहगीरों को अपनी इस झोंपड़ी में पनाह देता हूँ। लेकिन जब दूसरे दिन कि सुबह होती है तो कोई यहाँ से जाना नहीं चाहता और यहीं रुकने कि जिद करने लगता है। अब मैं बार-बार इस झंझट में नहीं पड़ना चाहता तो मैं आपको अपनी इस झोंपड़ी में रुकने नहीं दे सकता। यह सुनकर राजा थोड़े अचंभित हुए और फिर बोले कि मैं आपको वचन देता हूँ कि मैं ऐसा नहीं करूँगा और सुबह होते ही अपने घर के लिए चला जाऊंगा। तो राजा कि इस बात पर बीमार बहेलिया राजा पर भरोसा कर उसको रुखने के लिए जगह दे देता है। अब राजा रात को वहीं विश्राम करने के लिए लेटता है और उस झोंपड़ी की गंध उसके अंदर जा रही थी और सुबह होते-होते राजा का अंदर उस गंध को ऐसा नशा चढ़ गया कि वो भी अपना वचन भूल दूसरे लोगों की भाँति वहीं पर रुकने कि बात करने लगा और इस बात को लेकर राजा ने उस बीमार बहेलिया से कलह कर लिया।

फिर शुकदेव राजा परीक्षित से पूछते है कि क्या उस राजा ने यह सही किया तो शुकदेव के इस प्रश्न का जवाब देते हुए राजा परीक्षित ने कहा कि नहीं उसने बिल्कुल गलत किया और वो मूर्ख राजा था जो अपना इतना अच्छा राज पाठ छोड़कर और अपना वचन तोड़ कर उस गन्दी झोंपड़ी में रहना चाहता था। क्या आप बता सकते हो कौन था वो राजा? तब शुकदेव जी ने कहा कि वह राजा कोई और नहीं स्वयं तुम ही हो राजन। जो कि इस मल मूत्र से भरे झोंपड़ी यानी इस शरीर में रहना चाहते हो जब के तुम्हारी आत्मा का इस शरीर में रहने का समय समाप्त हो गया है। तब भी तुम उसके ही शोक में पड़े हुए हो। और फिर शुकदेव जी पूछते है कि क्या अब भी मरने का शोक करना सही है। उसके बाद राजा परीक्षित ने अपने मन से मौत का डर निकालने का फैसला किया और अपने अंतिम समय तक पूरे भक्ति भाव से कथा श्रवण की। परीक्षित ने शुकदेव जी से सात दिनों तक भागवत कथा सुनी। कथा सुनने के बाद परीक्षित का मन शांत हो गया, जन्म-मृत्यु का डर खत्म हो गया, सांसारिक चीजों से उनका मोह भी खत्म हो गया था। सातवें दिन तक्षक नाग ने उन्हें डंस लिया था।

शुक ताल

उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर से प्रायः तीस किलोमीटर दूर सड़क मार्ग पर गंगा के तट पर अवस्थित है यह तीर्थ। जहाँ पहली बार शुकदेव जी ने राजा परीक्षित को श्रीमद्‌भागवत सुनाया था। शुकदेव मंदिर के अलावा यहाँ साढ़े छिहत्तर फीट ऊंची ऐसी हनुमान प्रतिमा भी दर्शनीय है जिसके भीतर सात सौ करोड़ बार लिखे गए राम नाम समाहित हैं।

(आयुर्वेद)

पालक के स्वास्थ्य में लाभ

- डॉ.सुमा जोषि

पालक को कच्चा, सलाड में और सूप, करी या कैसरोल में पकाकर खाया जाता है। ऐसा माना जाता है कि पालक की उत्पत्ति लगभग 2000 साल पहले प्राचीन फारस में हुई थी, जहाँ से इसे ''फारसी सब्जी'' के रूप में 647 ई. में नेपाल के माध्यम से भारत और बाद में प्राचीन चीन में लाया गया था। पालक का वैज्ञानिक नाम है - Spinacia Oleracea और कुल है- Amaranthaceae.

यह एक वार्षिक पौधा (शायद ही कभी द्विवार्षिक) है, जो 30 cm (1 फीट) तक लम्बा होता है। समशीतोष्ण क्षेत्रों में पालक अधिक शीत ऋतु में रह सकता है। पत्तियाँ वैकल्पिक, सरल, अण्डाकार से त्रिकोणीय और आकार में बहुत परिवर्तनशील होती हैं; 20-30 cm लम्बी और 1-15 cm चौडी, पौधे के आधार पर बडी पत्तियाँ होती हैं। फूलवाले तने पर छोटी पत्तियाँ ऊँची होती हैं। फूल पीले-हरे, अगोचर 3-4 mm व्यास के होते हैं और 5-10 mm के छोटे, कठोर, सूखे, ढेलेदार फलों के समूह में परिपक्व होते हैं जिनमें कई बीज होते हैं।

कच्चे पालक में 91% पानी, 4% कार्बोहाइड्रेट, 3% प्रोटीन और नगण्य वसा (Fat) होती है। यह विटामिन ए, विटामिन सी, मैंगनीज और फोलेट (31-52%) का एक समृद्ध स्रोत है जिसमें 'विटामिन-के' की विशेष रूप से मात्रा ज्यादा है। पालक विटामिन बी, राइबोफ्लेविन और विटामिन बी ६, विटामिन ई, पोटेशियम, आयरन, मैग्नीशियम और आहार फाइबर का एक मध्यम स्रोत (10-19%) है।

आयुर्वेद में इस शाका को पालंका, पालक, पालका के नामों से जाना जाता है। अष्टांग हृदय में इसे पाचन के लिए भारी कहा गया है। इसमें चिपचिपा गुण होता है।

स्वास्थ्य में पालक का उपयोग

एनीमिया होने पर नियमित रूप से पालक का सेवन फायदेमन्द होता है। क्यों कि यह आयरन का एक समृद्ध स्रोत है। वजन घटाने को बढ़ावा देने के लिए जूस के रूप में इसका सेवन किया जा सकता है।

हालाँकि पर्याप्त वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं, पालक दीर्घकालीन थकान को प्रबन्धित करने में उपयोगी हो सकता है। पालक को भोजन की मात्रा में लेना सुरक्षित है। हालाँकि, स्तनपान के दौरान पालक की खुराक लेने से पहले अपने डॉक्टर से परामर्श करना उचित है।

पालक रक्त के थक्के जमने की गति को धीमा कर सकता है। इसलिए आमतौरपर यह सलाह दी जाती है कि थक्कारोधी (Anti-coagulants) दवाओं के साथ पालक लेते समय अपने डॉक्टर से परामर्श करें। पालक रक्तशर्करा के स्तर को कम कर सकता है। इसलिए आमतौरपर सलाह दी जाती है कि पालक को एंटीडयाबिटीज दवा। पालक किडनी की बिमारियों को बढ़ा सकता है। इसलिए आमतौरपर सलाह दी जाती है कि किडनी की बिमारी होने पर पालक का सेवन करते समय डॉक्टर से सलाह लें।

गर्भावस्था में पालक को भोजन की मात्रा में लेना सुरक्षित है। परन्तु, पालक की खुराक लेने से पहले अपने डॉक्टर से परामर्श करें। पालक की कुछ पत्तियों को पानी के साथ मिलाकर पेस्ट बना लें। इसे स्कैल्प पर लगाएं और कम से कम 2-3 घंटे के लिए छोड दें। किसी हर्बल शैम्पू का उपयोग करके इस सादे पानी से धो लें। यह बालों को नमी प्रदान करता है और उनके प्राकृतिक विकास को बढ़ावा देता है।

पालक को चुटकी भर हल्दी, अदरक और काली मिर्च के साथ पकाएँ। एक सुखदायक सूप बनाने के लिए इसे ब्लेंड करें जो न केवल पाचन में सहायता करता है बल्कि ठण्ड के दिन में गर्मी भी प्रदान करता है। पालक, गाजर और चुकंदर का मिश्रण एक पुनर्जीवन देनेवाला रस बना सकता है जो त्वचा को फिर से जीवन्त करता है और शरीर को डिटॉक्सीफाई करता है।

पालक में जैक्सैन्थिन और कैरोटीनॉयड होने हैं, जो शरीर से मुक्त कणों को बाहर निकालने में मदद कर सकते हैं। हरी पत्तेदार सब्जियों से भरपूर आहार भी कैंसर से बचाने में मदद कर सकता है। पालक प्रोटीन, कैल्शियम, विटामिन और खनिजों से भरपूर होता है, जो हड्डियों को मजबूत बनाने में मदद कर सकता है। दिन में एक कप पालक दैनिक कैल्शियम की एक चौथाई जरूरत को पूरा कर सकता है।

पालक में विटामिन-ए होता है, जो आंखों को हाइड्रेटेड रखने में मदद करता है और जैक्सैंथिन और ल्यूटिन, जो आखों के स्वास्थ्य को बढ़ावा देते हैं। पालक उच्च रक्तचाप को कम करने में मदद कर सकता है, जो हृदयरोग और स्ट्रोक का कारण बन सकता है। वजन प्रबंधन : पालक में कैलोरी कम है। प्रोटीन और आयरन अधिक होता है, जो पेट भरा हुआ महसूस करने और भोजन के बीच स्नैकिंग से बचने में मदद कर सकता है।

पालक के रस में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में होता है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देने और संक्रमण-बीमारियों से बचाने में मदद कर सकता है। पालक में मौजूद विटामिन सी त्वचा में कोलेजन उत्पादन को उत्तेजित कर सकता है, जिससे झुर्रियां और ढीलापन कम हो सकता है। विटामिन-ए त्वचा को सूरज की Ultraviolet किरणों से होनेवाले नुकसान से बचाने में भी मदद कर सकता है।

पालक में जिंक और मैग्नीशियम का उच्च स्तर रात में बेहतर नीन्द प्राप्त करने में सक्षम बनाता है, जो विभिन्न मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के प्रबंधन में सहायता कर सकता है। यह पत्तेदार साग मस्तिष्क के सुचारु कामकाज में मदद करता है, खासकर बुढ़ापे के दौरान।

मुंहासों को रोकता है : यदि मुंहासे हैं तो पालक का सेवन करें जिससे त्वचा में सूजन कम होगी और मुहांसे कम होंगे। पालक का पेस्ट बनाकर (थोडा पानी डालकर) चेहरे का मास्क भी तैयार किया जा सकता है। एक बार यह हो जाना के बाद, इसे चेहरे पर लगाएँ और 20 मिनट तक प्रतीक्षा करें। इससे त्वचा में सूजन कम हो जाएगी और मुँहासे पैदा करनेवाली गन्दगी और अतिरिक्त तेल निकल जाएगा।

पालक एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है जिसमें समय से पहले बूढ़ा होने का कारण बननेवाले मुक्त कणों को नष्ट करने और रोकने की प्रवृत्ति होती है। बहुत अधिक पालक खाने से स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड सकता है। जैसे : पाचन सम्बन्धी समस्याएँ, गुर्दे की पथरी, गठिया, रक्त पतला होना। इसीलिए वैद्य से परामर्श करके ही इसका प्रयोग करें।

''स्वस्थ रहें। सुरक्षित रहें।''

अगस्त महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

मेष राशि - शनि की दृष्टि होने के कारण व्यवसायिक क्षेत्रों में हालात अस्थिर एवं अनिश्चित रहेंगे। धन-धान्य की वृद्धि, आरोग्य कष्ट, कौटुम्बिक चिन्ता, वाहन कष्ट, बन्धुओं से मतभेद उभरेंगे। व्यय अधिक आमदनी अल्प। छात्रों के लिए परिश्रम पूर्ण सफलता। अपनी बुद्धि विवेक से कार्य करे धोखा मिल सकता है।

वृषभ राशि - मासारम्भ में शुक्र सिंह राशि में संचार करेगा। जिससे स्वास्थ्य खराबी, विचारों में उग्रता, शक्तिसंवर्धन, घरेलु उलझनें, वृथा वाद-विवाद से परेशानी रहेगी। शैक्षणिक अवरोध-उदासीनता, सुख-सौहार्द्र की वृद्धि, समय अनुकूल नहीं है। सावधानीपूर्वक क्रय-विक्रय करें।

मिथुन राशि - यह माह आपके मिश्रित फलदायक रहेगा। स्वास्थ्य उत्तम, धनागम में वृद्धि, परिश्रम-प्रयास और अपने चातुर्य से कार्य सिद्धि, अनेकानेक स्त्रोतों से लाभ के अवसर प्राप्त होंगे। शारीरिक कष्ट, चर्मरोग से परेशानी, मानसिक तनाव, सहयोगियों से अनुकूलता, संतान सुख।

कर्कटक राशि - सूर्य-शुक्र का संचार होने के कारण कार्य व्यवसाय में स्थिति कुछ अनुकूल रहेगी। आरोग्य सुख, विचारों में उग्रता, किसी दूसरों के ऊपर विश्वास न करें। भाई-बन्धुओं का सहयोग प्राप्त होगा। किसी शुभ कार्य पर धन खर्च होगा। रचनात्मक-विकासात्मक प्रयासों में सफलता, मान-सम्मान में बढ़ोत्तरी।

सिंह राशि - यह माह आपके लिए मिश्रित फलदायक रहेगा। व्यवसाय में उन्नति व लाभ के अवसर प्राप्त होंगे। आत्मीयजनों का सहयोग, प्रतियोगी क्षेत्र में सफलता, शारीरिक सुख, गृहस्थ जीवन सुखमय। भोग-विलासादि पदार्थों पर धन व्यय अधिक होंगे।

कन्या राशि - अपने मन को शान्त रखकर कार्य सम्पादन करे किसी के बहकावें में न पड़े अत्यन्त संघर्षपूर्ण हालात का सामना रहेगा। आर्थिक संतुलन परन्तु लेन-देन में सावधानी रखे, व्यर्थ की भागदौड़ व मानसिक तनाव रहेगा। बौद्धिक विकास, अपने दिनचर्या पर ध्यान रखे स्वास्थ्य उत्तम रहेगा।

तुला राशि - बनते कामों में विघ्न और विलम्ब होगा। नौकरी में किसी से धोखा मिल सकता है। सावधानी बरतें। विद्या-बुद्धि का विकास, सृजनात्मक शक्ति का विकास। अधिक धन खर्च होने से मन परेशान और अशान्त रहेगा। शरीर कष्ट और चोटादि का भय रहेगा।

वृश्चिक राशि - विपरीत परिस्थितियाँ धीरे-धीरे अनुकूल होंगी। शुभ विचारों का उदय, पराक्रम और पुरुषार्थ से कुछ बिगड़े कार्यों में सुधार होगा। आरोग्य सुख, पारिवारिक सुख-सौहार्द्र में वृद्धि। गुरु की दृष्टि होने से धर्म-कर्म में अभिरुचि, सन्तान सम्बन्धी सुख तथा सोची योजनाओं में कामयाबी मिलेगी।

धनुष राशि - आपके ऊपर मंगल की दृष्टि रहने से निर्वाह योग्य धन लाभ के अवसर प्राप्त होंगे। स्वास्थ्य सामान, तनाव-विवाद दुर्घटना से मानसिक कष्ट होगा, आर्थिक पक्ष अनुकूल रहेगा। इष्ट-मित्र, सगे सम्बन्धियों का सहयोग प्राप्त, रोजी-रोजगार में श्रमपूर्ण सफलता। रोजगार के नये अवसर मिलेगा।

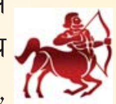

मकर राशि - सूर्य की सप्तम दृष्टि होने के कारण मानसिक तनाव एवं घरेलु उलझने बढ़ेंगी। स्वास्थ्य सामान्य, व्यावहारिक जीवन में संयम जरूरी, कार्यों में अत्यधिक संघर्ष के बाद धन लाभ अल्प रहेगा। रुके हुए कार्यों में सुधार, परन्तु आय कम खर्च अधिक होगा, धनागम में बाधा।

कुंभ राशि - मासारम्भ में उलझनों के बावजूद धन लाभ व उन्नति के अवसर प्राप्त होंगे। पराक्रम, धैर्य, विवेक बुद्धि और वाणी पर नियंत्रण, क्रोध संयम करने के उपरान्त कार्यों में सफलता प्राप्त होंगे। किसी शुभ कार्यों पर धन व्यय होगा। पारिवारिक कलह, पत्नी कष्ट।

मीन राशि - साहस-पराक्रम की वृद्धि। राशिस्वामी गुरु तृतीय भावस्थ होने से शुभ कार्यों पर धन व्यय होगा। कुछ बिगड़े काम बनेंगे, नये लोगों से सम्पर्क, रहन-सहन में बदलाव, शक्ति संवर्धन, दाम्पत्य जीवन सुखमय रहेगा। नवीन मित्रों के साथ मेल-जोल बढ़ेगा। वाहनादि सुख-सुविधाओं पर खर्च अधिक होंगे।

(नीतिकथा)

एक लक्ष्य - एकलव्य

- डॉ.जी शेक षावली

(आत्मविश्वास, लगन, एक लक्ष्य और श्रद्धा-भक्ति से छात्र सर्वोत्कृष्ठ स्थान प्राप्त कर सकते हैं।)

जन्म : महाभारत के आदिपर्व में 'एकलव्य' की कथा आती है। महाभारत काल में प्रयाग(इलहाबाद) के गंगा तटवर्ती प्रदेश में सुदूर तक फैला श्रृंगवेरपुर राज्य का निषाद राजा हिरण्यधनु का पुत्र 'एकलव्य' था। उनकी माताजी रानी 'सुलेखा' थी। उनका बचपन का नाम 'अभिध्युम्न' था। लोग उसे 'अभय' नाम ही बुलाते थे।

बचपन : एकलव्य को बचपन से ही, अस्त्र-शस्त्र विद्या में मुख्य रूप से धनुर्विध्या में बहुत रूचि थी। बालक एकलव्य की आत्मविश्वास, लगन और एक लक्ष्य की निष्ठता को देखते हुए बचपन के गुरु बालक का नाम 'एकलव्य' रख दिया था।

एकलव्य, गुरु द्रोणाचार्य से विनती : एकलव्य के मन में धनुर्विद्या के प्रति जिज्ञाशा दिन-ब-दिन बढती गयी। अपने निषाद गुरु जनों से, कौरव और पांडुओं के गुरु द्रोणाचार्य की कीर्ति जानकर, जंगल में कौरव और पांडुओं के समक्ष गुरु द्रोणाचार्य से (विद्याभ्यास) शिक्षा के लिए, प्रार्थना की।

द्रोणाचार्य जी का वचन : द्रोणाचार्य ने भीष्म पितामह को वचन दिया था कि- ''वे कुरु वंश के राजकुमारों को हीं शिक्षा देंगे'' और अर्जुन को भी वचन दिया था कि - ''तुम से बड़ा धनुर्धर कोई नहीं होगा।'' अर्थात-अर्जुन को धनुर्विद्या में सर्वश्रेष्ठ बनाना चाहते थे।

गुरु द्रोणाचार्य, एकलव्य की विनती का तिरस्कार : 'एकलव्य' निषाद शूद्र जाति का था। उस समय शिक्षा केवल क्षत्रिय और ब्राह्मण जाति बालकों को मात्र दी जाती थी। इत्यादि कारणों से गुरु द्रोण ने एकलव्य को शिक्षा देने से मना कर दिया था।

एकलव्य की दीक्षा : एकलव्य ने एक निष्ठा से, आत्मविश्वास के साथ सुदृढ़ लगन से द्रोणाचार्य की मूर्ति बनाकर, उसी मूर्ति को गुरु मान कर भक्ति और श्रद्धा से गुरु द्रोणाचार्य जी का ध्यान कर, उसी से प्रेरणा लेकर धनुर्विद्या का एक लक्ष्य से लगातार अभ्यास करने लगा। जिस से वह भी धनुर्विद्या में प्रतिभावान हो गया है।

राजकुमारों का कुत्ता : एक दिन पांडव और कौरव राजकुमार गुरु द्रोण के साथ शिकार के लिए पहूँचे। राजकुमारों का कुत्ता एकलव्य के आश्रम में जा

पहूँचा और भौंकने लगा। कुत्ते के भौंकने से एकलव्य को अभ्यास करने में परेशानी हो रही थी। तब उसने बाणों से कुत्ते का मुंह बंद कर दिया। एकलव्य ने इतनी कुशलता से बाण चलाए थे कि कुत्ते को बाणों से किसी प्रकार की चोट नहीं लगी। जब कुत्ते को गुरु द्रोण ने देखा तो वे धनुर्विद्या का यह कौशल देखकर दंग रह गए। तब बाण चलाने वाले की खोज करते हुए वे एकलव्य के पास पहूँच गए। एकलव्य की प्रतिभा देख कर, द्रोणाचार्य संकट में पड गए। अचानक अर्जुन को दिया हुआ वचन याद आते ही, एकलव्य से कहा कि- ''हे एकलव्य! मेरी मूर्ति को रखकर, तुमने धनुर्विध्या तो सीख ली। लेकिन मेरी गुरु दक्षिणा कौन देगा? एकलव्य ने तुरंत कहा कि- ''गुरुदेव! आप जो मांगेंगे? मैं देने के लिए तैयार हूँ। द्रोण ने तुरंत कहा कि- ''मुझे तुम्हारा दाए हाथ का अंगूठा गुरु दक्षिणा में चाहिए। उन्होंने इसलिए मांगा कि - ताकि एकलव्य कभी धनुष चला न पाए। एकलव्य एक पल भी विचार किया बिना अपने दाए हाथ का अंगूठा काटकर गुरु द्रोणाचार्य जी के चरणों में अर्पित किया।

विवाह : एकलव्य युवा होने पर उसका विवाह 'हिरण्यधनु' नामक युवती से हुआ। यह युवती एकलव्य के पिता के निषाद मित्र की पुत्रिका थी। उनको केतुमान नामक एक पुत्र हुआ।

एकलव्य और उनके पुत्र की मृत्यु : पिता की मृत्यु के बाद एकलव्य राजा बना। उसने निषाद भीलों की सेना बनाई। वह स्वयं धनुर्विद्या सीखता हुआ अपनी सेना को भी सिखाता था। इस प्रकार अपने राज्य का विस्तार करता था। अंगूठे के बिना भी एकलव्य धनुर्विद्या में दक्ष हो गया था। एकलव्य श्रीकृष्ण को शत्रु मानने वाले जरासंध के साथ मिल गया था। जरासंध की सेना की तरफ से उसने मथुरा पर आक्रमण भी किया। एकलव्य ने यादव सेना के अधिकतर योद्धाओं को मार दिया था। श्रीकृष्ण जानते थे, अगर एकलव्य को नहीं मारा गया तो यह महाभारत युद्ध में वह कौरवों की ओर से लड़ेगा और पांडवों की परेशानियाँ बढ़ा सकता है। श्रीकृष्ण और एकलव्य के बीच युद्ध हुआ, जिसमें एकलव्य मारा गया। एकलव्य के बाद उसका पुत्र केतुमान राजा बना। महाभारत युद्ध में केतुमान कौरवों की सेना की ओर से पांडवों से लड़ा था। इसका वध भीम ने किया था।

कहानी से सीख : सुदृढ़ लगन, आत्मविश्वास, एक लक्ष्य पर दृष्टी रखकर भक्ति-श्रद्धा के साथ लगातार परिश्रम करेगा तो वह अवश्य सर्वोत्कृष्ट स्थान पर पहुँचेगा। बिना अंगूठा भी वह आत्मविश्वास से धनुर्विद्या में दक्ष बना और कौरव सेना में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त किया। ऐसे महावीर मृत्यु के बाद भी अमर हैं।

सर्वेजना सुखिनोभवंतु।

जून-2024 महीने का क्विज-23 के समाधान

1) कर्नाटक, 2) ओं नमो नारायणाय,

3) हिरण्यकशिप, 4) चतुरस्राकार में,

5) गन्धर्व, 6) दिल्ली शहर, 7) जनक महाराज,

8) भगवान श्रीराम, 9) लंका नगर,

10) सीता देवी, 11) वाल्मीकी ऋषि,

12) ध्वजारोहण, 13) उग्र रूप में,

14) ध्यान की मुद्रा, 15) विष्वक्सेन.

चित्रकथा

'आगे की सोच अनिवार्य है'

तेलुगु मूल - डॉ.के.रविचंद्रन्
अनुवादक - डॉ.एम.रजनी
चित्रकार - श्री टी.शिवाजी

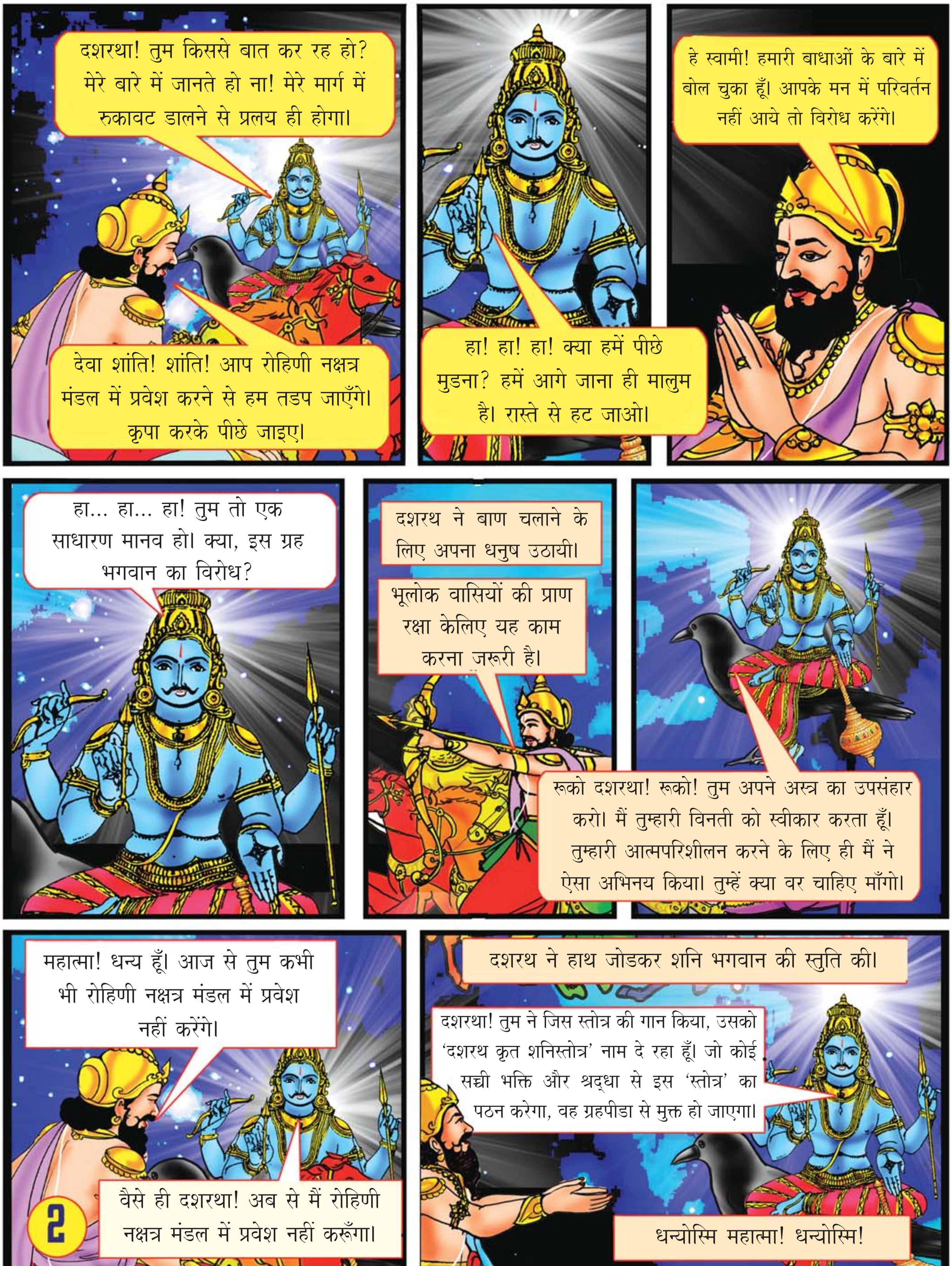
दशरथा! तुम किससे बात कर रह हो? मेरे बारे में जानते हो ना! मेरे मार्ग में रुकावट डालने से प्रलय ही होगा।
देवा शांति! शांति! आप रोहिणी नक्षत्र मंडल में प्रवेश करने से हम तडप जाएँगे। कृपा करके पीछे जाइए।
हा! हा! हा! क्या हमें पीछे मुडना? हमें आगे जाना ही मालुम है। रास्ते से हट जाओ।
हे स्वामी! हमारी बाधाओं के बारे में बोल चुका हूँ। आपके मन में परिवर्तन नहीं आये तो विरोध करेंगे।
हा... हा... हा! तुम तो एक साधारण मानव हो। क्या, इस ग्रह भगवान का विरोध?
दशरथ ने बाण चलाने के लिए अपना धनुष उठायी।
भूलोक वासियों की प्राण रक्षा केलिए यह काम करना जरूरी है।
रूको दशरथा! रूको! तुम अपने अस्त्र का उपसंहार करो। मैं तुम्हारी विनती को स्वीकार करता हूँ। तुम्हारी आत्मपरिशीलन करने के लिए ही मैं ने ऐसा अभिनय किया। तुम्हें क्या वर चाहिए माँगो।
महात्मा! धन्य हूँ। आज से तुम कभी भी रोहिणी नक्षत्र मंडल में प्रवेश नहीं करेंगे।
2
वैसे ही दशरथा! अब से मैं रोहिणी नक्षत्र मंडल में प्रवेश नहीं करूँगा।
दशरथ ने हाथ जोडकर शनि भगवान की स्तुति की।
दशरथा! तुम ने जिस स्तोत्र की गान किया, उसको 'दशरथ कृत शनिस्तोत्र' नाम दे रहा हूँ। जो कोई सच्ची भक्ति और श्रद्धा से इस 'स्तोत्र' का पठन करेगा, वह ग्रहपीडा से मुक्त हो जाएगा।
धन्योस्मि महात्मा! धन्योस्मि!

तिरुमल तिरुपति देवस्थान,
तिरुपति।

प्रश्नोत्तरी (क्विज) की नियमावली

1) प्रश्नोत्तरी की प्रतियोगिता केवल 15 वर्षों के अंदर बच्चों के लिए है।
2) भाग लेने वाले बच्चे हिंदु धर्म के होना अनिवार्य है।
3) इस प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले बच्चों के अभिभावक अनिवार्य रूप से ति.ति.दे. के द्वारा प्रकाशित होने वाली 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक मासिक पत्रिका का चंदादार होना आवश्यक है। प्रश्नोत्तरी के जवाबों के साथ अनिवार्य रूप से चंदादार की अपनी चंदा संख्या, नाम, पता, पिन-कोड के साथ फोन नंबर भी स्पष्ट रूप से लिख कर हमारे कार्यालय को भेजना चाहिए।
4) प्रश्नोत्तरी के जवाब, प्रश्नों के नीचे सूचित खाली जगहों पर लिख कर भेजना चाहिए।
5) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र ओरिजनल या जिराक्स प्रति मान्य है।
6) जवाबों में कोई काट-छांट या सुधार नहीं होना चाहिए।
7) प्रश्नोत्तरी के जवाब पत्र **इस महीने का 25वाँ तारीख** के अंदर पहुँचाने की अंतिम तिथि है।
8) इस प्रश्नोत्तरी या क्विज में सही जवाब लिखने वाले बच्चों में से तीन बच्चों को मात्र ही 'लक्कीडिप पद्धति' में चुन कर विजेताओं की घोषणा की जाती है।
9) घोषित विजेताओं के नाम आगामी मास की 'सप्तगिरि' पत्रिका में प्रकाशित किए जाते हैं।
10) ति.ति.दे. के प्रधान संपादक कार्यालय में कार्यरत कर्मचारियों के बच्चे इस प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता के लिए अयोग्य हैं।
11) प्रश्नोत्तरी से संबंधित कोई भी समाचार फोन से नहीं दिया जाएगा। कृपया फोन से संपर्क न करें। ति.ति.दे. का निर्णय ही अंतिम है।
12) क्विज का समाधान भी इसी पुस्तक में है।

प्रश्नोत्तरी-जवाब कृपया इस पते पर भेजे :-
प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे. प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507, तिरुपति जिला, आंध्र प्रदेश।

बच्चे का नाम...
लिंग/आयु............, चंदा नंबर........................
पता..
....
मोबाइल नं..

क्विज-25

1) आंध्रप्रदेश में स्थित तरिगोंडा नामक गाँव में विराजित भगवान का नाम क्या है?
ज)..
2) ''श्री वेंकटाचल माहात्म्यम्'' ग्रंथ का मूल लेखक कौन है?
ज)..
3) श्रावण मास के मंगलवार के समय संपन्न करनेवाली पूजा क्या है?
ज)..
4) श्रावण मास के शुक्रवार के समय संपन्न करने वाली पूजा क्या है?
ज)..
5) एकलव्य का गुरु कौन है?
ज)..
6) एकलव्य का विवाह किससे हुआ था?
ज)..
7) शनेश्चर भगवान को किसने अवरोध किया?
ज)..
8) किस नक्षत्र मंडल में शनेश्चर भगवान प्रवेश नही करते हैं?
ज)..
9) श्रीकृष्ण परमात्मा किस युग में अवतार धारण किया?
ज)..
10) श्रीराम चंद्र ने किस युग में अवतार धारण किया?
ज)..
11) 'गीतोपदेश' को किसने प्रदान किया?
ज)..
12) गरुड़ की माताजी का नाम क्या है?
ज)..
13) विनता के पती का नाम क्या है?
ज)..
14) श्री महाविष्णु का वाहन क्या है?
ज)..
15) तिरुवल्लिक्केणि मंदिर के उत्सवर का नाम क्या है?
ज)..

बालविकास

बिंदी को जोड़िए

रंगों को भरिये क्या!

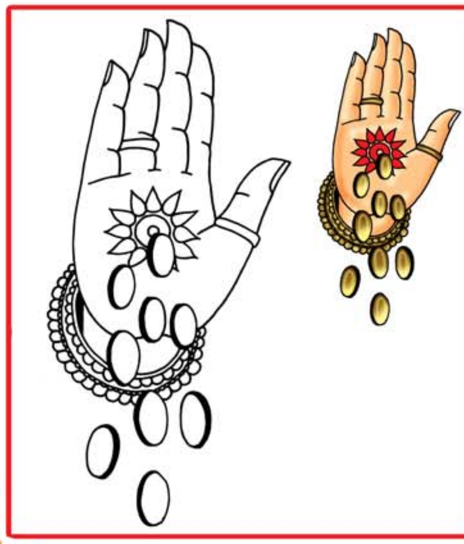

निम्न लिखित को मिलाएँ!

1) गरुड़	अ) अंजनादेवी
2) हनुमान	आ) यशोदा
3) गणेश	इ) कुंती
4) कर्ण	ई) विनता
5) श्रीकृष्ण	उ) पार्वती

1) ई 2) अ 3) उ 4) इ 5) आ

एक श्लोकी भागवतम्

आदौ देवकिदेवि गर्भजननं
गोपी गृहेवर्धनं मायापूतन
जीवितापहरणं गोवर्धनोद्धारणम्।
कंसच्छेदन कौरवादि हननं
कुंतीसुतापालनं ह्येतद्भागवतं
पुराणकथितं श्रीकृष्णलीलामृतम्।।

चित्रों को जोडिएँ

(a)

(b)

(c)

(d)

(e)

जवाब : a)5, b)4, c)2, d)3, e)1.

(1)

(2)

(3)

(4)

(5)

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

1. नाम : ....
   (अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
   ....
   पिनकोड ....
   मोबाइल नं ....
2. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नड ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत
3. वार्षिक चंदा ☐ रु.240/-; जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) ☐ रु.2,400/-; विदेशियों के लिए वार्षिक चंदा ☐ रु.1,030/-
4. चंदा का पुनरुद्धरण :
   (अ) चंदा की संख्या :
   (आ) भाषा :
5. शुल्क का विवरण :
   धनादेश (BC's) / मांगड्राफ्ट संख्या (D.D.) /
   भारतीय डाकघर (IPO) / ई.एम.ओ. (EMO) / :
   दिनांक :

स्थान :

दिनांक : चंदा भरनेवाले का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.240/-, जीवन चंदा (12 वर्ष ही मात्र) : रु.2,400/- 'प्रधान संपादक, ति.ति.दे., तिरुपति' के नाम से मांगड्राफ्ट लेकर निम्न सूचित पते पर भेज सकते हैं।
- नवीन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र के कूपन को काटकर, एक कागज पर चंदादार को अपने पूरे विवरण के साथ सुस्पष्ट लिखकर निम्न पते पर भेजना चाहिए।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय,
दूसरा मंजिल, ति.ति.दे.प्रेस, के.टी.रोड,
तिरुपति-517 507. तिरुपति जिला, (आं.प्र)

धोखा मत खाओ!

हमारी दृष्टि में आया है कि कुछ लोग 'सप्तगिरि' आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका की सदस्यता के लिए यह कह कर राशि वसूल करने में मग्न हैं कि वे श्री बालाजी के दर्शन, प्रसाद आदि की व्यवस्था करेंगे। ऐसे लोगों पर विश्वास न करें। उनसे सावधान रहें।

श्री बालाजी के दर्शन और प्रसाद पाने के लिए 'सप्तगिरि' पत्रिका कार्यालय से कोई संपर्क न करें। क्यों कि उन से पत्रिका कार्यालय का कोई संबंध नहीं है। कृपया चंदादार अपना चंदा नकद को सीधा 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, ति.ति.दे., तिरुपति' पता को भेजना पडेगा।

ति.ति.देवस्थान ने सदस्यता राशि लेने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया। अतिरिक्त राशि का भुगतान न करें। दलालों पर विश्वास मत करें।

STD Code: 0877

दूरभाष : 2264359, 2264543.

संपादक : 2264360

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

मंत्र - ॐ नमो वेंकटेशाय

https://ttdevasthanams.ap.gov.in
इस वेबसैट से भी सप्तगिरि पत्रिका चंदा भर सकते है।

Printed by Sri P. Ramaraju, M.A., and Published by Dr.K. Radha Ramana, M.A., M.Phil., Ph.D., on behalf of Tirumala Tirupati Devasthanams and Printed and Published at Tirumala Tirupati Devasthanams Press, K.T.Road, Tirupati-517 507. Editor : Dr.V.G. Chokkalingam, M.A., Ph.D.

भक्तों की सेवा में...
तिरुमल तिरुपति देवस्थान के कार्यनिर्वहणाधिकारी

दि. 20-06-2024 को तिरुमल में स्थित नारायणगिरि षेड्स, नारायणगिरि बगीचा में हुए क्यू लाइन को जाँच करते हुए ति.ति.दे. के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस., के साथ जे.ई.ओ. श्री वी.वीरब्रह्मम्, आई.ए.एस., और जे.ई.ओ. श्रीमती एम.गौतमी, आई.ए.एस., (एच&ई) ने भाग लिया।

दि. 17-06-2024 को तिरुमल में स्थित लड्डू प्रसाद तैयारी केंद्र (पोटू) को निरीक्षण करते हुए ति.ति.दे. के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस., और जे.ई.ओ. श्रीमती एम.गौतमी, आई.ए.एस., (एच&ई)।

दि. 17-06-2024 को तिरुमल में स्थित मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा नित्य अन्नप्रसाद केंद्र को निरीक्षण करते हुए ति.ति.दे. के कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री जे.श्यामला राव, आई.ए.एस., और जे.ई.ओ. श्री वी.वीरब्रह्मम्, आई.ए.एस.

SAPTHAGIRI (HINDI) SPIRITUAL ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
Printing on 25-07-2024 & Posting at Tirupati RMS Regd. with the Registrar of Newspapers for
India under RNI No.10742/1957. Postal Regd.No.TRP/152/2024-2026 "LICENCED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
No.PMGK/RNP/WPP-04(2)/2024-2026" Posting on 5th of every month.

वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूर मर्दनम्।
देवकी परमानंदं कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्।।

(27-08-2024 को गोकुलाष्टमी)